Annual Subscription Rs. 100/- ओ३म् 12 th March 2013

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హింది-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

आह्वान

दुनिया में ऊँचे-ऊँचे सिद्धांतों एवं आदर्शों वाला कोई संगठन केवल बौने नेतृत्व की वजह से क्यों और कैसे निस्तेज हो जाता है इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण आज का आर्य समाज है। दैदिप्यमान दयानन्द के दिव्य बलिदान से उपजा यह पौधा जब तक श्रद्धानंद लाजपत राय, लेखराम, बिस्मिल और अश्फाक जैसे क्रांतिवीरों के लहू से सींचा जाता रहा, फलता-फूलता रहा और ब्रिटिश हुकूमत के विख्यात दस्तावेज 'अनरेस्ट इंडिया' के लेखक को स्वीकार करना पड़ा कि 'व्हेयर देयर इज आर्य समाज, देयर इज म्यूटिनी एंड इज अनरेस्ट' (जहाँ-जहाँ आर्य समाज है, वहाँ-वहाँ बगावत और विद्रोह है) लेकिन जब वही आर्य समाज साँप की तरह कुंडली मारे मटाधीशों के हाथों चढ़ गया, तो एमरजेंसी की काली रात के लिए जिम्मेदार संजय गाँधी को 'विवेकानंद का अवतार' बताकर चरण वंदना करने लगा और गिरवट की सीमा लाँघकर उसका नेतृत्व अपने क्षुद्र स्वार्थों की खातिर एच.के.एल. भगत जैसे भ्रष्ट नेताओं का झोली तक बन गया।

इसमें अब कोई संदेह नहीं कि रहा कि आर्य समाज के पास अभी भी जो ऊर्जा बाकी है, उसे समेटकर यदि आर्यवर्त के सांस्कृतिक पुनर्जागरण की मशाल प्रज्ज्वलित की जाए और शहीदों की शहादत से प्रेरणा लेकर साम्प्रदायिकता, जातिवाद, अंग्रेजी और अंग्रेजियत, शराबखोरी और नारी उत्पीड़न के विरुद्ध आर्य वीरों, वीरांगनाओं के कदम बढ़ने लगे, तो भारत भूमि एक बार पुनः आलोकित हो उठेगी। निराशा के बादल छंट जाएंगे। संघर्ष का नगाड़ा बजते ही बौना नेतृत्व और अधिक बौना होकर कोने में सिमट जाएगा। आर्य समाज की नवोदित शक्ति से जहाँ राष्ट्रवादी - समतावादी, संस्कारवादी पुलकित होकर संगठित होने लगेगा, वहीं अराष्ट्रीय, शोषक एवं संस्कारहीन ताकतें बुजदिलों की तरह छिपने लगेंगी।

१९९० का दशक हमें पुकार रहा है। आज तक के सभी उतार-चढाव से सबक लेते हुए और समाज के सामने खड़ी चुनौतियों से जूझते हुए यदि हमने अगले दस वर्ष अपने प्रवर्तक दयानन्द के नक्शे कदम पर चलकर दिखा दिया, तो निश्चित आखिरी जीत हमारी होगी, आने वाला कल हमारा, आनेवाली शताब्दी हमारी होगी। मजहबी जुनूनियों और देशद्रोहियों द्वारा रौंदी जा रही कश्मीर की वादियाँ हमें पुकार रही हैं। खलिस्तानी उग्रवादियों के हाथों कत्लगाह बनती जा रही रावी, व्यास और सतलज की वीर-प्रसविनी धरती हमें पुकार रही है। शोषण विषमता, बेरोजगारी और काले अंग्रेजों के शिकंजे में पिसता हुआ भारत अपनी आज़ादी के लिए छटपटाता हमें पुकार रहा है। जातिवादी उन्माद में सुलगते दलितों, की झोपडियाँ और अपनी अस्मत के लिए सुबकती आदिवासी बेटियाँ हमें पुकार रही हैं। दहेज की बलिवेदी पर धू-धू करके जलती बहनों की चिताएं हमें पुकार रही हैं।

क्या यह सब कुछ देखते हुए भी हम आँखें बंद कर लेंगे? सब कुछ समझते हुए भी चुपचाप बर्दाश्त करते रहेंगे? कवि नीरज ऐसे ही संदर्भ में पूछ रहे हैं-

दे रहा है आदमी का दर्द जब आवाज़ दर-दर
तुम रहे चुप तो कहो सारा ज़माना क्या कहेगा?
जब बहारों को खड़ा नीलाम पतझर कर रहा है
तुम नही फिर भी उठो तो आशियाना क्या कहेगा?

और जवाब भी दे रहे हैं-

बदतमीजी कर रहे हैं आज फिर भौंरे चमन में
साथियों । आँधी उठाने का ज़माना आ गया है।
मत बजाते ही रहो तुम तान वीणा के पुराने
मौत से आँखें मिलाने का ज़माना आ गया है।

प्रसन्नता की बात है कि आर्य समाज की युवा पीढ़ी ने इस बदतमीजी को बंद करने का संकल्प ले लिया है और अब यह आंधी उठकर रहेगी। देश की राजधानी नई दिल्ली में १४ व १५ जुलाई १९९० को आयोजित किया गया ऐतिहासिक राष्ट्रीय आर्य कार्यकर्ता सम्मेलन आर्य समाज की नई छवि निखारेगा। साम्प्रदायिक संकीर्णता से ऊपर उठकर समस्त राष्ट्रवादी शक्तियों को एक मंच पर लाने का अभिनव प्रयास होगा ताकि कश्मीर, पंजाब और अन्य स्थानों पर व्याप्त विघटनकारी काली ताकतों को परास्त किया जा सके। जो भी हिन्दू, मुस्लिम, सिख इसाई नेता

ओ३म्

आर्य जीवन

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

ఆర్య జీవన్

హింది-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश हैदराबाद का मुख पत्र

वर्ष : २२ अंक : ०५
दयानन्दाब्द : १८९
सृष्टि संवत् : १९७२९४९११३
वि.सं. : २०६९
नंदन नाम संवत् फागुन शुक्ल पक्ष
१२-३-२०१३

सम्पादक
विट्ठलराव आर्य
वार्षिक मूल्य रू. 100

कार्यालय
आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश
महर्षि दयानन्द मार्ग, सुल्तान बाजार, हैदराबाद

दूरभाषः 040-24753827, 66758707, 24750363
फ्याक्सः 040-24557946, 24756983

Email :
aaryajeevan_aaryajivan@yahoo.co.in,
arpratinidhisabha@yahoo.co.in,
acharyavithal@gmail.com,
aryavithal@yahoo.co.in.

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR

Editor: Vithal Rao Arya
Annual subscription: **Rs.100/-**

प्रत्येक मनुष्य को पुरुषार्थ पर ध्यान देना चाहिए। इसी के द्वारा क्रियामाण, संचित और प्रारब्ध कर्म की स्थिति सुधरती है। इसी से मनुष्य उत्तम स्थिति को प्राप्त हो कर उन्नति के पात्र बनते है।

इस काम में आर्य समाज का साथ देना चाहेंगे, आर्य समाज खुलकर उनका स्वागत करेगा और उनके सहयोग, समर्थन से मंदिर मस्जिद के झगडों को एक कोने में डालते हुए राष्ट्र की अखंडता एवं राष्ट्रीय एकता की जबरदस्त लहर पैदा करेगा। इसके साथ ही आगरा, मण्डावरी, सावरकांठा, आदि स्थानों पह हमारे दलित समाज के साथ किए जातीय उन्मादियों के वहशियाने दंगों के विरुद्ध प्रचण्ड जनमत जागृत कर जातिवाद की कोढ़ को समाप्त करने का अभियान चलाया जाएगा। डॉ. भीमराव अम्बेड़कर के जन्मशताब्दी पर उस महामानव को भी श्रद्धांजलि देने का इससे अच्छा क्या रास्ता होगा कि समाज की सभी प्रवुद्ध ताकतें सामाजिक ऊँच-नीच के तमाम भेदभाव और छुआछूत जैसी घृणित परम्पराओं को तिलांजलि देकर भारतीय समाज को गौरवान्वित करें।

इसी तरह अंग्रेज़ी का वर्चस्व बनाकर इस राष्ट्र की मौलिक प्रतिभा को कुण्ठित करके रखने का जो षड्यंत्र पिछले ४५ वर्षों से चल रहा है, उसका सरे बाज़ार भण्डाफोड़ करके उस षडयंत्र को हमेशा के लिए समाप्त करना हमारा दायित्व होगा। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानंद जैसा क्रांतिकारी नेतृत्व हमें प्रेरणा देगा, तो जिस तरह गोरे अंग्रेज़ों को भारत की धरती से खदेड़ा गया था, अब ठीक उसी तरह उनके दलाल काले अंग्रेजों को भी इस देश से अलविदा किया जाएगा, ताकि करोड़ों युवा मन-मस्तिष्क अपनी मातृभाषा और भारतीय भाषाओं के माध्यम से माँ भारती की सेवा में समर्थ हो सकें और विषमता मूलक शिक्षा व्यवस्था और समाज व्यवस्था की जड़ें हिलाई जा सकें।

इस तरह और भी अनेकों क्रांतिकारी निर्णयों के साथ आर्य समाज का संगटनात्मक पुनर्गठन होगा। और व्यर्थ के विवादों में परस्पर कटुता और शक्ति के अपव्यय से बचकर आर्य समाज अपने अतीत से प्रेरणा लेता हुआ उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर होगा।

हमारे प्रमुख साथी श्री कैलाश सत्यार्थी ने इस छोटी सी पुस्तिका में आर्य समाज के उज्ज्वल अतीत का हवाला देकर वर्तमान का विश्लेषण करके नए भविष्य की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की है। साम्प्रदायिकता और जातिवाद के खिलाफ संघर्ष की रूपरेखा बनाने में उनके विचार निश्चय ही बड़े उपयोगी साबित होंगे।-**स्वामी अग्निवेश**

पाणिनि विद्यालय व काशी की गौरव आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

वेद वेदांग पुरस्कार से सम्मानित

पू. आचार्या पाणिनि कन्या महाविद्यालय की आचार्या हैं। आचार्या सूर्यादेवीजी चतुर्विदा को आर्य समाज सान्ताक्रुज, मुंबई ने सर्वोत्कृष्ट 'वेद-वेदांग पुरस्कार' द्वारा २७ जनवरी २०१३ को सम्मानित कर देश का गौरव बढ़ाया है। यह पुरस्कार अब तक पुरुष वर्ग को ही प्राप्त होता था।

आर्य समाज सान्ताक्रुज ने इस मिथक को तोड़ा और प्रथम कड़ी के रूप में आचार्या सूर्यादेवीजी चतुर्वेदा को इस महनीय सम्मान से सम्मानित किया।

आप वेद, व्याकरण, निरुक्त, आदि वेदांगों, ब्राह्मण, दर्शन, उप निषद, आदि सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय की गम्भीर विदुषी हैं। आपने त्रिपदी गौ, विद्वन्मिलनम, वेद समाधान समस्या, ब्रह्मवेद है अथर्ववेद आदि ग्रंथों की संरचना की है। सम्पूर्ण पतंञ्जल महाभाष्य हिंदी में किया है। आपकी इस सारस्वत साधना से आर्य जगत भली प्रकार से परिचित है।

आप आर्य समाज व दयानन्द मिशन की सजग प्रहरी हैं। इस सम्मान से जहाँ पाणिनि कन्या विद्यालय का गौरव हुआ है, वहीं, काशी सहित सम्पूर्ण राष्ट्र का गौरव बढ़ा है।
--लीलावती

आर्य समाज और चुनौतियाँ

- कैलाश सत्यार्थी

सौ साल पहले अमेरिका में बैठे प्रसिद्ध दार्शनिक एंड्रयू जैक्सन ने लिखा था, 'मुझे पूर्व दिशा में एक आग दिखाई दे रही है, जो स्वामी दयानन्द के दिल में सुलग रही है और आर्य समाज की भट्टी में दधक रही है।'

इसके आठ साल बाद कांग्रेस के इतिहास में डॉ. पट्टाभिसीतारामैया ने लिखा था, आज़ादीके आंदोलन में जेल जाने वालों में अस्सी प्रतिशत यातो आर्यसमाजी थे, या किसी न किसी रूप में आर्य समाज से प्रभावित थे। किन्तु आर्य समाज की यह छवि तब थी, जब शहीद भगतसिंह के दादा सरदार अर्जुनसिंह जैसे लोग हर रोज़ घोड़े पर पचास-पचास मील दूर तक के गाँवों में चक्कर लगाकर धार्मिक पाखण्ड का पर्दाफाश करने के साथ ही राष्ट्रीयता का संदेश फैलाया करते थे। शहीद रामप्रसाद बिस्मिल और अश्फाक उल्ला खाँ शाहजहाँपुर के आर्य समाज मन्दिर में रहकर 'ओ३म भूर्भवः स्वः' की तोता रटंत करके हवन में घी-सामग्री डालना भर ही अपना धर्म नहीं समझते थे, बल्कि वहाँ बैठकर काकोरी कांड जैसी योजनाएँ बनाया करते थे। तब लाला लाजपतराय, श्यामजीकृष्ण वर्मा, लेखराम, श्रद्धानंद, जैसे कट्टर आर्यसमाजी सिर्फ मंच से भाषण नहीं देते थे, बल्कि फिरंगी हुकुमत के खिलाफ बगावत की मशाल भी थामते थे। भजनीकों की सैंकड़ों टोलियाँ फाका मस्ती करके भी गाँवों में जातिवाद, साम्प्रदायिकता, मूर्तिपूजा, नारी उत्पीड़न, दहेज, शराब, जुआ आदि के खिलाफ लोकभाषा में गीत व भजन बनाकर व गाकर अलख जगाती थीं।

किन्तु देश-विदेश में फैला छह हज़ार से ज्यादा शाखाओं, लाखों सदस्यों, हज़ारो शिक्षण संस्थाओं, गुरुकुलों, योग व आयुर्वेदिक केंद्रों वाला समाज आज पूरी तरह निस्तेज और गतिहीन बनकर 'हिन्दु सम्प्रदायवाद' का अंग बन गया है। इतना ही नहीं, 'शुद्धि आंदोलन' जैसी चीजों के चलते उसकी छवि मुस्लिम व ईसाई विरोधी मुहिम सी बन गई थी। इससे ज्यादा दुर्भाग्यजनक और क्या हो सकता है कि आर्य समाज को भागे हुए प्रेमी-प्रेमिकाओं से पैसा ऐंठकर विवाह का सर्टिफिकेट देने वाली एजेंसी और समाज भवनों को शादी-ब्याह जैसे कामों के लिए किराएं पर चलने वाली धर्मशालाएं मान लिया गया है।

स्वदेशी और स्वराज्य शब्द इस देश के राजनैतिक आंदोलन के लिए आर्यसमाज की देन है। भारतीय समाज के पतन के मूल कारणों, ब्राह्मणवाद और धार्मिक पाखंड, मूर्तिपूजा, नारी उत्पीडन, सांप्रदायिकता, जातिवाद आदि के खिलाफ संगठित आंदोलन की शुरुआत करने वाला आर्य समाज आज देश की चुनौतियों की ठीक-ठाक पहचान करके उनका मुकाबला

लेखक के विचार से सहमत हों या न हों

पर कुछ करने की ज़रूरत है।

श्री कैलाश सत्यार्थी द्वारा उन्नीस सौ नब्बे के दशक में लिखा हुआ यह लेख आज भी समीचीन लता है। वास्तव में आर्य समाज को और उससे सम्बन्धित सभी संस्थाओं को आत्मविश्लेषण कर, समीक्षा कर अपनी कार्यशैली को बदलने की जरूरत है। विभिन्न गुट कर लेने के बाद भी सम्मेलनों से दशा-दिशा बदलने में नाकामियाब रहे है। मेरी उक्त पंक्ति पर ईमानदारी से विश्लेषण करलें। अपने-अपने अहंभाव से व चार दीवारी से नहीं उभरेंगे, तो आर्य समाजी पद और संपत्ति के झमेलों में ही फंसे रहेंगे। उन्हें लगता होगा कि वे बहुत कुछ कर रहे हैं। पर वह खानापूर्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं। मैं और आप सब इसमें शामिल हैं। कुछ भी नहीं बदलता है तो यह संस्था मरी लाश ही साबित होगी। फिर एक-दूसरे को शाबाशी व बधाई देते रहना। इतिहास में नामों-निशां नहीं रहेगा।

करने की बजाए, अपने ही संस्थावाद के मकड़जाल में बुरी तरह उलझ गया है और अपनी दुकान चला रखने के लिए अतीत की गाथाएं गाते हुए दूसरे तमाम राजनैतिक और धार्मिक संप्रदायों की तरह अपने ही कुएं को दुनिया समझ बैठा है।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद ने मरने से पहले ज़ोर देकर कहा था कि मेरी राख और अस्थियों को किसी गंगाजल या संगम में नहीं बहाना, न ही किसी जगह गाड़कर रखना। बल्कि जगह-जगह खेतों में बिखेर देना, जिससे वे किसी किसान की मिट्टी में मिलकर फसलों के काम आ सकें। मेरे नाम पर कोई समाधि या स्मारक न बनाया जाए .... जहाँ-जहाँ जो भी बातें मैंने कही हैं, उन्हें जैसी की तैसी न मानकर समयानुसार तर्क और बुद्धि की कसौटी पर परखी जाएँ। दुर्भाग्य से आर्य समाज का पूरा का पूरा संगठनआज दयानंद की समाधि भर बनकर रह गया है।

किन्तु इसके बावजूद देश के हज़ारों आर्य समाजी सभा-संस्थानों और मठों की इस समाधि से अलग दयानंद के विचारों की चिंगारियाँ अपने भीतर संजोए समाज की कुरीतियों के खिलाफ लड़ रहे हैं। इसका प्रमाण पिछले कुछ वर्षों में अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ियत के वर्चस्व के खिलाफ उठाई गई आवाज़ें सती के महिमामंडन के खिलाफ की गई दिल्ली-दिवराला पदयात्रा व उसके माध्यम से नारी उत्पीड़न से जुड़े तमाम सवालों पर आर्य समाजियों का रचनात्मक अभियान पुरी के शंकराचार्य द्वारा भारतीय नारी अस्मिता का हनन करने वाली टिप्पणियों का जबरदस्त विरोध, हरिजनों के मंदिर प्रवेश का सांकेतिक मुद्दा उठाकर दलित उत्पीड़न, और जातिवाद के खिलाफ नाथ द्वारा मंदिर प्रवेश अभियान और कई जगह आयोजित साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलन पदयात्रा आदि राष्ट्रीय महत्व की घटनाओं में देखा जा सकता है।

आज देश के सामने जो बड़ी-बड़ी चनौतियाँ हैं, वे हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक ढाँचें और उसकी विकृतियों की पैदाइश हैं। इनका हल संसद में कानून बना देने, लालफीताशाही की फाइलबाज़ी, पुलिस की फाइरिंग व कर्फ्यू तथा राजनैतिक बयानबाज़ियों से संभव नहीं है। राजनीति के भीतर की मूल्यहीनता और खोखलेपन नेइन समस्याों को और विषम बना दिया है। कश्मीर, पंजाब और देश के दूसरे इलाकों में फैली सांप्रदायिकता की जडें, धार्मिक कठमुल्लेपन, पोंगापंथियों और बुद्धि पर ताला लगाने वाले मज़हबी आतंकवाद तक जाती है। राम जन्मभूमि और बाबरी मस्जिद का विवाद सुरसा की तरह मुँह बाए जा रहा है। हिन्दुओं और मुसलमानों की अस्मिता और गरिमा इतनी संकुचित हो गई है कि वह ज़मीन के एक टुकड़े पर अधिकार की लड़ाई पर आकर टिक गई है। जो चिंता रामभक्त तुलसीदास और राष्ट्र भक्त महाराणा प्रताप या शिवाजी को नहीं हुई, उसमें हरि विष्णु डालमिया और लालकृष्ण आडवाणी घुले जा रहे हैं। जिस मुद्दे पर अकबर और इकबाल को इस्लाम खतरे में नज़र नहीं आया, उस पर

इमाम बुखारी और सैयद शहाबुद्दीन का कलेजा सिकुड़ा जा रहा है।

इन चुनौतियों के प्रति निर्गुण-निराकार भाव रखने से काम नहीं चलेगा। प्रेम, एकता, सत्य, ईमानदारी, वगैरह की बातें तब तक निर्गुण हैं, जब तक घृणा, विखराव, असत्य व बेईमानी केकारणों और कर्ताओं की ठीक पहचान न हो जाए और तब तक निराकार है, जब तक कि इन कारणों व कर्ताओं से लड़ने की मानसिक तैयारी और व्यावहारिक योजना नहीं बन जाती।

आतंकवाद की आग में झुलस रहे पंजाब और आर्य समाजियों की भूमिका को आर.एस.एस. या हिन्दू सभाइयों से अलग करके देख पाना मुश्किल है। क्या यह आर्य समाज के दिवालियापन की निशानी नहीं कि राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद के सवाल पर मुस्लिम फिराकपरस्ती का मुकाबला करने के लिए आर्य समाज खुद को हिन्दू सांप्रदायिकता का पिछलग्गु बना जाले? धर्म की आड़ में राम शिला पूजन जैसा पाखण्डपूर्ण षड्यंत्र फैलाने के लिए हाल ही में दिल्ली मेंघूम रही कथित साधुओं की टोलियों का स्वागत वे आर्य समाजी कररहे थे, जो 'शिलापूजन' के विरोध के लिए हिन्दू सम्प्रदायवादियों से अपने सिरों पर लाठियाँ खाते रहे हैं।

आर्य समाज के साहित्य और विचार में ईसाइयत और इस्लाम आदि की अवैज्ञानिकता का जितना विरोध है, उससे ज्यादा हिन्दुत्व का प्रखर विरोध ही किया। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख वगैरह सभी से स्वामी दयानन्द के समान रिश्ते थे। लेकिन आज कितने लोग जानते हैं कि आर्य समाज की पहली कार्य समिति में एक मुसलमान सज्जन हाजी अल्लाह रक्खा रहमतउल्ला सोनावाला भी थे। भारत में बम्बई के कांकड़वाड़ी आर्य समाज भवन में दानदाताओं की सूची में सबसे ऊपर उन्हीं का नाम लिखा है। यहाँ तक कि आर्य समाज की स्तापना भी एक मुसलमान सज्जन की कोठी में हुई थी।

१८६६ की बात है, देवबन्द में इस्लामी शिक्षा का केंद्र बनाने के लिए जब इसके संस्थापक मोहम्मद कासिम साहब सौरों गाँव में आए, तो स्वामी दयानंद से मिले और अपनी योजना पर चर्चा की। इस काम के लिए पहला दान ४५० रुपया, जो कुल जमा राशि स्वामीजी के पास थी, उन्होंने कासिम साहब को दे दी। आज भी देववन्द के उस केंद्र में लगी नामपट्टिका और कागज़ातों में स्वामी दयानंद को 'रहबर-ए-आजम' कहकर संबोधित किया है।

इससे बढ़कर बात और क्या हो सकती है कि मृत्यु शैया पर पड़े स्वमी दयानंद से जब कुछ सुभ चिंतकों ने उनके निजी चिकित्सक अली मर्दान खाँ पर संदेह व्यक्त करके उन्हें हटाने का सुझाव दिया, तव स्वामीजी रो पड़े और फटकारते हुए बोले 'आप लोग आज तक मुझे नहीं समझ पाए' आखिर मुसलमान चिकित्सक ही इलाज में रहे। ईसाइयों की संस्था थियोसोफिकल सोसायटी से आर्य समाज के इतने अच्छे सम्बन्ध थे कि एनीबेसेन्ट उस सोसायटी का विलय आर्य समाज में करने जा रही थीं, लेकिन पुनर्जन्म के सैद्धांतिक मतभेद के कारण यह संभव न हो सका। सिख तो हाल के वर्षों तक अपने पंच ककारों को धारण करते हुए भी आर्य समाज के पदाधिकारी तक बने रहे।

आज आर्य समाज को अपने आप से पूछना चाहिए कि वह अपने इस उज्वल इतिहास से क्यों नहीं सीख पा रहा है? स्कूल चलाना आज क्रांतिकारी काम नहीं है, कभी रहा होगा। आज जरूरत है अपने मूल उद्देश्यों और इतिहास में छुपे उस गहरे सामाजिक अनुराग की, जिसके चलते ठोकर खाकर गिरने वाले बच्चे को माँ पहली गलती के लिए थप्पड़ मारती है, फिर गोद में लेकर दुलारती है। आर्य समाज तमाम मतावलम्बियों सेएक गहरी संवेदना के साथ जुड़ा हुआ था। इसलिए इन मज़हबों में जो भी बातें मनुष्य की बुद्धि को अंधा बनकर समाज को विभाजित करती थी, उनका ज़ोरदार खंडन किया गया। कई लोग जानकर हैरान होंगे कि जब स्वामी दयानंद बनारस गये, तो हिंदू मज़हब के खिलाफ प्रवचन किया। और जब अलीगढ़ पहुँचे, तो इस्लाम की आलोचना पर ही बोले। आज हम एक-दूसरे से डरे हुए हैं। इसलिए सांप्रदायिक सद्भाव की लीपापोतीतो करते हैं, सत्य की भागीदारी का साहस नहीं बटोर पाते। बढ़ती हुई सांप्रदायिकता हमारी आज की सबसे बड़ी सांस्कृतिक सामजिक बीमारी है, जिसे चुनौती की तरह स्वीकार करके आर्य समाज फिर से अपनी पहचान बना सकता है।

स्वामी दयानंद की दृढ़ मान्यता रही कि मनुष्यों को बाँटने वाला सत्य या धर्म नहीं हो सकता, क्योंकि अलग-अलग मनुष्यों के सच अलग-अलग नहीं हो सकते। इसलिए आर्य समाज की स्थापना मज़हबों के नाम पर फैले झूठ के खिलाफ लड़कर सबके साझा सत्य को सामने रखने के लिए ही की गई। स्वमी दयानंद ने तो १८७७ में हुए दिल्ली दरबार के दौरान दिल्ली में विभिन्न संप्रदायों के नेताओं की एक बैठक आयोजित की, जिसमें इसी साझा सत्य को खोजकर आपस में भेदभाव को खत्म करे पर ज़ोर दिया था। पिछले दिनों ऐसी-ऐसी जगहों पर सांप्रदायिक हिंसा का नंगा नाच हुआ, दर्जनों बेकसूर एक-एक दिन में मौत के घाट उतारे गए, जहाँ हिंदू-मुसलमान ने एक-दूसरे पर पत्थर तक नहीं फेंका था। इन्सानी जिस्म का खून पानी की तरह सड़कों पर बहकर गली-गली में अलगाव के पौधे रोप गया। दो हिस्सों में बाँट दिए गए तमाम शहरों और कस्बों के बीच काई को पाटने के लिए आज एक तीसरी शक्ति की ज़रूर है। सद्भावना की नकाब ओढ़े वोटपरस्त राजनेता कभी यह ताकत नहीं बना सकते। उनमें कई तो अपने फायदों के लिए दंगे भड़काते तथा हवा देते हैं। दंगों के बाद जिला कलेक्टरों द्वारा खानापूरी के लिए बनाई जाने वाली 'पीस-कमेटियाँ' सिर्फ कागज़ी नटक भर हैं। बुद्धिजीवियों और वामपंथियों की कोशिशें भी पुराने नासूर के कष्ट को मिटाने के लिए मेडीकल स्टोर की दर्द निवारक टिकिया बाँटने जैसी साबित होती हैं। वे ईमानदारी से चाहकर भी जनता के उस हिस्से में नहीं उतर सकते, जहाँ इस ज़हर का जनक कीटाणु बैठा है। दरअसल सांप्रदायिक उन्माद की जडें उस धर्मांधता में हैं, जो अपने मज़हब को सबसे अच्छा मानकर धर्मग्रंथों में हज़ार-दो हज़ार साल पुरानी बातों और प्रवर्तकों की कहानियों को पत्थर की लकीर की तरह मानती हैं।

आर्य समाज जैसा संगठन इस दिशा में असरदार पहल कर सकता है। क्योंकि आराधना पद्धति में आर्य समाजी मुसलमानों के काफी नजदीक हैं। दोनों बुतपरस्ती के खिलाफ हैं। धार्मिक पाखंडों को न मानने में वे सिखों से ज्यादा करीब हैं, या मिशनरी कामों में ईसाइयों के। **एक जबरदस्त लोकशक्ति बनने के लिए आर्य समाज को युद्ध स्तर पर कुछ रचनात्मक कार्य हाथ में लेने होंगे।** सभी आर्य समाजों की और सबाओं में मुसलमानों, ईसाइयों, और सिखों के वगैरह को उनकी पहचान कायम रखते हुए पहले की तरह सदस्य बनाया जाए, व कार्यक्रमों में शामिल किया जाए। छोटे-छोटे मज़हबों के नेताओं को मंच पर बुलवाया जाए,। **साप्ताहिक सत्संगों में सिर्फ हवन-पूजा के बजाए स्थानीय मुद्दों पर अहिंसक ढंग से सत्याग्रह चलाए जाएँ।** निशपक्ष सोचने वाले आर्य बुद्धिजीवी और नेता, दंगा ग्रस्त क्षेत्रों की सही जाँच रपटें प्रकाशित कराएं। जुलूस, जलसे फिज़ूलखर्ची के तमाशों की जगह दंगापीड़ित क्षेत्रों में सभी मज़हबों के लिए तात्कालिक सहायता और पुनर्वास का काम हाथ में लिया जाए। सांप्रदायिकता विरोधी पदयात्राएँ और सम्मेलन जगह-जगह आयोजित कराए जा सकते हैं। इस तरह सम्भव है कि उस तीसरी वैकल्पिक ताकत को जन्म दिया जा सके, जो आज धर्मों के नाम पर एक-दूसरे के खून के प्यासों को फिर से करीब ला

शिवभक्तों कुछ सोचें...

- आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

शिवरात्रि पर्व का अनुष्ठान करते-करते कई शताब्दियाँ बीत गईं, पर इस अनुष्ठान के धूमधाम में यत्किञ्चित भी व्यवधान व बाधा नहीं है। अनुष्ठान जैसे पहले होता था, वैसे आज भी है, कुछ अधिक ही है, न्यून का तो प्रश्न ही नहीं। भक्तगण शिवरात्रि का अनुष्ठान प्रतवर्ष अतिश्रद्धा , निष्ठा के साथ करते हैं। इस अनुष्ठान के अभीष्ट देव शिव हैं। इन अभीष्ट देव शिव को देश, प्रान्त के भेद से अनेक विभिन्न संबोधनों से सम्बोधित किया जाता है। ये शिवजी काशी में बाबा विश्वनाथ नाम से सम्बोधित हैं, तो उज्जैन में महाकालेश्वर नाम शिव का बहुत प्रतिष्ठित नाम है। इस प्रतिष्ठित महाकालेश्वर सम्बोदन की विशेषता में एक गर्वमयी लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

काल उसका क्या करें, जो भक्त हो महाकाल।।

काल शब्द का अर्थ है काला रंग, समय, संहारक नियम आदि। महाकालेश्वर का अर्थ है- **महांश्चासौ कालेश्चेति महाकाल, महाकालाश्चासौ ईश्वरश्चेति महाकालेश्वरः**, अर्थात कालों का काल ईश्वर। इस प्रकार लोकोक्ति का तात्पर्य हुआ महाकालेश्वर वह है, जो शत्रु, मृत्यु आदि को दूर कर भक्तों की रक्षा करता है, उनका कल्याण करता है। उज्जैन के महाकालेश्वर की यह भी विशेषता है कि उनकी आराधना जहाँ बिल्वपत्र, गुलाब पुष्प, चावल, चन्दन, रोली, मौली, गुड़, दुग्ध आदि द्रव्यों से होती है, वहीं स्मशान से लाई गई ताजी भस्म भी होती है। इस आराधना को 'भस्म आरती' भी कहा जाता है। शवि महाकालेश्वर का यह भस्म आरती आराधन प्रातः ५ बजे होता है। श्मशान से भस्म लाने का कार्य नरमुण्डधारी

शिवरात्रि पर विशेष

औघड़ को होता है। भस्म आरती के समय यजमान की पत्नी को वहाँ खड़े होने का अधिकार नहीं होता। मात्र यजमान, पुजारी गण एवं भस्म लाने वाला औघड़ ही वहाँ रहते हैं। वर्तमान में पुजारी गण ही भस्म आरती करते हैं, औघड़ एक तरफ खड़ा रहता है। भस्म आरती का यह तरीका है कि श्मशान से लायी गई लगभग ५-६ किलो भस्म वस्त्र में रखकर वस्त्र की पोटली सी बनाकर शिवलिंग पर वह भल्म तब तक झाड़ी जाती है, जब तक पूरी की पूरी भस्म शिवलिंग पर न छन जाए। भस्म आरती करने से पूर्व शिवलिंग को खूब धोया, मंजा जाता है। चंन्द, रोली आदि से त्रिनेत्र आदि बनाए जाते हैं, पुष्प आदि भी चढ़ा दिये जाते हैं।

उज्जैन के मंदिर में स्थित महाकालेश्वर को देखने के सन २००४ से लेकर अब तक कई अवसर आये हैं। एक बार पुनः इसी गत ५ नवम्बर २०१२ को भी महाकालेश्वर देखने का अवसर बन गया। उज्जैन स्थित 'महर्षि सान्दीपनी राष्ट्रीय वेद-विद्या प्रतिष्ठान द्वारा ४,५,६,७ नवम्बर २०१२ को 'द्वितीय विश्व वेद सम्मेलन' का आयोजन किया गया। जिसमें अनेक वेदविदों ने भाग लिया, मैंने भी अपनी विशिष्ट भागीदारी निभायी। उज्जैन के स्थानीय महाकालेश्वर के भक्तों तथा वेद सम्मेलन में पधारे भक्तों ने महाकालेश्वर की प्रशंसा के खूब पुल बाँधे। इतने दूर से आकर महाकालेश्वर को नहीं देखा, तो कुछ नहीं देखा। महाकालेश्वर को देखना अति कल्याणकारी है। एतद्दश सबके आग्रह, अनुग्रह के कारण निरर्थक होते हुए भी ५ नवंबर २०१२ को महाकालेश्वर स्थल में मुझे जाना ही पड़ा। पुनः रात्रि को महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद-विद्या प्रतिष्ठान परिसर के कार्यक्रम स्थल पर सी.डी. द्वारा 'भस्म आरती' का दृश्य भी सबने देखा। मन्दिर में तो भस्म आरती का दृश्य नारी जगत नहीं देख सकता।

उज्जैन के इस महाकालेश्वर को महाकवि कालिदास ने अप्यन्यस्मिञ्जलधर महाकालमासाद्य काले, मेघ १-३४, असौ महाकालनिकेतनस्य बसन्नदूरे किल चन्द्रमौले, रघु. ६-३४ आदि प्रसंगों में मेघदूत व रघुवंश आदि ग्रंथों के माध्यम से खूब अमर बनाया है।

महाकालेश्वर की इस सीरियल भस्म आरती को देखकर मेरा मन तो बुझ ही गया, ईश्वर के स्वरूप विषयक विचार भी चक्र-प्रतिचक्र करने लगे। जिस शिव महाकालेश्वर की आराधना, उपासना दुःखों का मुक्ति के लिए की जाती है, जिसके अकाय, निराकार, सर्वव्यापक, चेतन, सच्चिदानंद आदि विशेषण होते हैं, उसके साथ यह कैसी अशिष्टता-बदसलूकी है? ईश्वर की कृपा, ईश्वर का सानिध्य आदि राख छानने से मिलती है, तब तो उदर भरने के लिए चूल्हे में जलाई गई अग्नि की भस्म को छानने वाले उनकी अपेक्षा अति भग्यशाली ही होंगे। जो दिन में ३-४ बार चूल्हे में अग्नि जलाते हैं और उसकी भस्म को इधर-उधर उठाते-रखते हैं।

शिवभक्तों ! कुछ सोचें ! अभी समय है। अनादि निराकार शिव ईश्वर प्राप्ति न भस्म आरती से होती है, न अन्य पत्र, पुष्प आदि के समर्पण से होती है। उस जगन्नियन्ता परमात्मा शिव की प्राप्ति तो उसके प्रमुख नाम ओ३म-प्रणव, जप, चित्त की एकाग्रता तथा शास्त्र के

स्वाध्याय से होती है। योगदर्शन के भाष्यकार व्यास कहते हैं-

तदस्य योगिनः प्रणवं जपतः प्रणवार्थं च भावयतश्चित्तमेकाग्रं संपद्यते। तथा चोक्तम-

स्वाध्यायाद्योगमासीत योगात स्वाध्यायमामनेत।

स्वाध्याययोगसम्पत्या परमात्मा प्रकाशते।।

व्या. भा. योग १-२८।।

अर्थात उस ईश्वर से योग करने वाले जन का ओंकार जपते हुए और ओंकार के रक्षक आदि रूप अर्थ का अनुभव करते हुए चित्त एकाग्र हो जाता है। जैसा कि कहा है- स्वाध्यायात= पवित्र ओ३म् के जप करने तथा मोक्ष का उपदेश करने वाले शास्त्रों के पढ़ने से (**स्वाध्यायः प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्षशास्त्राध्यनं वा.** व्या. भा. योग २-२) एवं **योगात्** = चित्तवृत्ति का निरोध करके उपासना करे। (**योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः**, योग. १-२) एवं योगात् = चित्तवृत्ति के निरोध से, स्वाध्यायम् = ओ३म् के जाप का, आमनेत्= अभ्यास करे(म्नाभ्यासे)स्वाध्याय योग साम्पत्या = इस ओ३म् जप तथा चित्तवृत्ति की सम्पत्ति = सिद्धि से, परमात्मा प्रकाशते = परमात्मा का प्रकाश होता है।

व्यास वचन से स्पष्ट है, जिसके शिव, ओ३म् आदि नाम है, वह ईश्वर तो प्रणव जाप, मोक्ष का उपदेश करने वाले शास्त्रों के पढ़ने, पढ़ाने एवं मन की एकाग्रता से प्राप्त होता है। जो जन ईश्वर की प्राप्ति के लिए मूर्ति आदि का आश्रय लेते हैं और मूर्तिपूजा को मन के एकाग्र करने का साधन बताते हैं, वे महती भ्रांन्ति में हैं। मूर्तिपूजा से मन एकाग्र हो जाता है, यह मात्र उनकी मिथ्या अवदारणा है। व्यास ने तो मन के एकाग्र करने का साधन प्रणव जाप एवं प्रणव के रक्षा आदि अर्थ स्वरूप चिन्तन को बताया है।

परमात्मा के अनुग्रह, कृपा की प्राप्ति के लिए नम्रता, उदारता, आदि गुणों को धारण करना भी आवश्यक होता है। इन गुणों से ईश्वर की जहाँ कृपा प्राप्त होती है, वहीं, दुःखों के बन्धन भी टूट जाते हैं। वेद में कहा गया है-

मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा।

पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मण भुवत।।

ऋ ७-३२-१३।।

अर्थात् अखर्वं सुधिताम् = अभिमान रहित (खर्व दर्पे), हितकारी, विनम्र, सुपेशसं मन्त्रम = शोभनीय विचार को, यज्ञियेषु आ दधात = जीवन के समस्त उत्तम कार्यों में समर्पित करें, यताहि, यः कर्मणा = जो इन यज्ञिय श्रेष्ठकर्मों से, इन्द्रे भुवत् = ऐश्वर्यशाली परमात्मा में स्थित होता है, **तं पूर्वीश्चन प्रसितयः** = ऐसे व्यक्ति को पुराने बन्धन, दुःख बेडियाँ (षिञ बन्धने) , तरन्ति = छोड़ देती हैं।

मन्त्र का भाव है- जो उदारता, नम्रता, निष्कपटता का व्यवहार करता है, उसे ही परमात्मा की समीपता, सायुज्यता की प्राप्ति होती है। परमात्मा की समीपता को प्राप्त व्यक्ति के दुःख , बन्धन कष्ट, विपत्ति छूट जाते हैं। निरभिमानता व परमात्मा की समीपता के बिना दुःख, कष्ट विपत्ति आदि नहीं छूटते।

शिव परमात्मा उनके ही कष्टों, दुःखों, बन्धनों, विपत्तियों आदि को दूर करते हैं, जो निभिमान होकर शिव परमात्मा से समीपता बनाये रखते हैं। कणाद कहते हैं-

आत्मकर्मसु मोक्षो व्यख्यातः ।

वैशे. ६-२-१७।।

अर्थात् आत्मकर्मसु = उपासना आदि आध्यात्म कर्मों के करने पर मोक्ष कहा गया है।

वचन का तात्पर्य स्पष्ट है कि दुःख, विपत्ति आदि से छूटने के लिए अध्यात्म कर्म = आत्मा द्वारा कयि जाने वाले उपासना, वैराग्य आदि कर्म बहुत ही बड़े साधन हैं। दुःखादि निवृत्ति के उपयुक्त उपाय हैं, पत्थर = पाषाण पूजन-अर्चन नहीं।

कई शताब्दियों के पश्चात वेद, दर्शन, आदि शास्त्रों में विहित ईश्वर प्राप्ति के उपायों को जानने का फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी की शिवरात्रि को सर्वप्रथम संकल्प महर्षि दयानंदजी ने ही लिया। परंपरा से चली आ रही मूर्ति पूजा रूप ईश्वरार्चन पद्धति को उन्होंने एक झटके में उच्छिन्न कर दिया। अपने ज्ञान, तप-साधना के द्वारा ईश्वर उपासना की उचित विधि ढूँढ निकाली। महर्षि दयानन्द ने उस परब्रह्म ईश्वर की उपासना विधि का प्रतिपादन सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास में किया है। उस उपासना विधि के अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय, पञ्चकोशों का विवेचन, बैराग्य = विवेक से सत्यासत्य का जानना, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान यह षट्क सम्पति, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षात्कार ये श्रवण चतुष्ट्य आदि प्रमुख साधन हैं।

महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट उपासना के इन साधनों को अपनाने पर असत्य, अज्ञान, अन्धकार, अधर्म आदि दूर हो जाते हैं। सत्य, धरम, ज्ञान, यथार्थ आदि जीवन के अंग बन जाते हैं। परमेश्वर का उपासक शान्त, दान्त, आनन्द युक्त होता है, सच्चरित्र बनता है।

आज चरित्र भ्रष्टता सर्वत्र विद्यमान है। चरित्र भ्रष्ट होने के जहाँ अन्य कारण हैं, उनमें साकार पूजा भी बहुत बड़ा कारण है। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर की साकार पूजा के १६ दोष गिनाये हैं, उनमें चरित्र भ्रष्टता को भी गिनाया गया है। वे लिखते हैं-

पहला- साकार में मन स्थिर कभी नहीं हो सकता, क्योंकि इस साकार को मन झट ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में घूमता और दूसरे में दौड़ जाता है। और निराकार अनन्त परमात्मा के ग्रहण में यावत्सामर्थ्य मन अत्यन्त दौड़ता है, तो भी अन्त नहीं पाता।

निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता, किन्तु उसी के गुण कर्म स्वभाव का विचार करता करता आनंद में मग्न होकर स्थिर हो जाता है। और जो साकार में स्थिर होता है, तो सब जगत का मन स्थिर हो जाता है, क्योंकि जगत् में मनुष्य स्त्री, पुत्र, धन, मित्र आदि साकार में फँसा रहता है, परन्तु किसी का मन स्थिर नहीं होता, जब तक निराकार में न लगाएं क्योंकि निरवयव होने से उसमें मन स्थिर हो जाता है। इसलिए मूर्ति पूजा करना अधर्म है।

दूसरा- उसमें करोड़ों रुपए मंदिरों में व्यय करके दरिद्र होते हैं और उसमें प्रमाद होता है।

तीसरा - स्त्री-पुरुषों का मंदिरों में मेला होने से व्यभिचार लड़ाई, बखेड़ा और रोगादि उत्पन्न होते हैं।

चौथा - उसी को धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति का साधन मानकर पुरुषार्थ रहित होकर मनुष्य जन्म व्यर्थ गँवाता है।

पाँचवाँ- नाना प्रकार की विरुद्धस्वरूप, नाम, चरित्रयुक्त मूर्तियों के पुजारियों के ऐक्यमत नष्ट होकर विरुद्ध मत में चलकर आपसे में फूट बढाके देश का नाश करते हैं।

छठा- उसी के भरोसे में शत्रु का पराजय और अपना विजय मान बैठे रहते हैं। उनका पराजय होकर राज्य, स्वातंत्र्य और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भटियारे के टट्टू और कुम्हार के गधे के समान शत्रुओं के वश में होकर अनेकविध दुख पाते हैं।

सातवाँ- जब कोई किसी को कहे कि हम तेरे बैठने के आसन वा नाम पर पत्थर धरे, तो जैसे वह उस पर क्रोधित होकर मारता वा गाली प्रदान कर देता है, वैसे ही जो परमेश्वर के उपासना के स्थान, हृदय और नाम पर पाषाणादि मूर्तियाँ धरते हैं, उन दुष्ट बुद्धि वालों का सत्यानाश परमेश्वर क्यों न करें?

आठवाँ- भ्रांत होकर मंदिर, देश, देशांतर में घूमते थे-घूमते दुःख पाते, धर्म, संसार और परमार्थ का काम नष्ट करते, चोर आदि से पीड़ित होते, ठगों से ठगाते रहते हैं?

नौवाँ- दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं, वे उस धन को वेश्या, पर स्त्री गमन, मद्य-मांसाहार, लड़ाई, बखेड़ों में व्यय करते हैं, जिससे दाता का सुख का मूल नष्ट होकर दुख होता है।

दसवाँ- माता-पिता आदि माननीयों का अपमान कर पाषाणादि मूर्तियों का मान करके कृतघ्न हो जाते हैं।

ग्यारहवाँ- उन मूर्तियों को कोई तोड़ डालता या कोई चोर ले जाता है, तब हा-हा करके रोते रहते हैं।

बारहवाँ- पुजारी परस्त्रियों के संग और पुजारिन पर पुरुषों के संग प्रायः दूषित होकर स्त्री-पुरुष के प्रेम के आनंद को हाथ से खो बैठते हैं।

तेरहवाँ- स्वामी सेवक की आज्ञा का पालन यथावत न होने से परस्पर विरुद्ध भाव होकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं।

चौदहवाँ- जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़ बुद्धि हो जाता है, क्योंकि ध्येय का जड़त्व धर्म, अंतःकरण द्वारा आत्मा में अवश्य आता है।

पंद्रहवाँ- परमेश्वर ने सुगंधी युक्त पुष्पादि पदार्थ, वायु, जल के दुर्गंध निवारण और आरोग्यता के लिए बनाए हैं। उनको पुजारी जी तोड़-ताड़कर, न जाने उन पुष्पों की कितने दिन तक सुगंधी आकाश में चढ़कर वायु, जल की शुद्धि करता और पूर्ण सुगंधी के समय तक उसका सुगंध होता, उसका नाश मध्य में ही कर देते हैं। पुष्पादि कीच के साथ मिल सड़कर उल्टा दुर्गंध उत्पन्न करते हैं। क्या परमात्मा ने पत्थर पर चढ़ाने के लिए पुष्पादि सुगंधी युक्त पदार्थ रचे हैं?

सोलहवाँ- पत्थर पर चढ़े हुए पुष्प, चंदन और अक्षत आदि सबका जल और मृतिका के संयोग होने से मोरी वा कुंड में आकर सड़के इतना उससे इतना दुर्गंध आकाश में चढ़ता है कि जितना मनुष्य के मल का। और सहस्त्र जीव उसमें पड़ते, उसी में मरते और सड़ते हैं। ऐसे-ऐसे अनेक मूर्तिपूजा के करने में दोष आते हैं। इसलिए सर्वथा पाषाणादि मूर्तिपूजा सज्जन लोगों को त्यक्तव्य है। और जिन्होंने पाषाणमय मूर्ति की पूजा की है, करते हैं और करेंगे, वे पूर्वोक्त दोषों से न बचे, न बचते हैं और न बचेंगे।

इस प्रकार महर्षि दयानंद ने निराकार ईश्वर का संदेश देकर शिवरात्रि भक्तों का अहोभाग्य जगाया है। ईश्वर शक्ति का सही मार्ग दिखाया है। चरित्र निर्माण की उत्तम शिक्षा दी है। १) मन की अस्थिरता, मूर्तिपूजा रूप अधर्म, २) दरिद्रता, प्रमाद, ३) व्यभिचार, ४) पुरुषार्थ रहति मनुष्य जन्म की निरर्थकता ५) आपसी फूट, विरोध ६) पराधीनता ७) ईश्वर के दंडरूप सत्यानाश, ८) भ्रांति दुःख, धर्मादि व परमार्थ का नाश, ठगाना, ९) परस्त्री गमन, मद्य, मांसाहार, १०) माता-पिता के प्रति कृतघ्नता, ११) मूर्तिभग्नता व चोरी पर रुदन, १२) पुजारी जनों के पर स्त्र-पुरुषों के परस्पर संयोग से आनंद का होना, १३) स्वामी सेवक के परस्पर विरुद्ध होकर नष्ट होना, १४) आत्मा पर जड़त्व धर्म का अवश्य आना, १५) पुष्पादि की सड़न से दुर्गंध उत्पन्न करना, १६) पुष्प, चंदन, अक्षत आदि में जल, मूर्तिका के संयोग द्वारा उठी दुर्गंध से आकाश को दूषित करना, मूर्तिपूजा के इन १६ दुःखों से बचाया है।

कल्याणकारी, शिव, निराकार ईश्वर की कृपा चाहने वाले जनों को महर्षि दयानंद के इन संदेशों का अनुगमन करना अति आवश्यक है। इस अनुगमन से स्वतः उनका व देश का कल्याण ही नहीं, बहुकल्याण होगा। कल्पित महाकालेश्वर कल्याण करें, या न करें। पर कालों का काल निराकार ईश्वर अवश्य कल्याण करता है। ईश्वर की आराधना के रूप में 'भस्म आरती' आदि निरर्थक कार्यों को छोड़, कालों के काल ईश्वर शिव के बहु कल्याण को प्राप्त करें।

नदी के दूसरे पार खड़े होकर गुर्राना वीरता नहीं

- इं. रामेश्वर दयालु गुप्त

महर्षि दयानंद ने श्रीमती परोपकारिणी सभा की स्थापना वेद के प्रसार- प्रचार एवं आर्ष साहित्य को अक्षुण्ण रखकर संसार के प्राणी मात्र को उसके आदेशों, निर्देशों से अप्लावित रखने के लिए की थी। परंतु परोपकारिणी सभा से येन-केन प्राकरेन जुड़े कुछ लोगों ने जिनमें से कुछ अपने को स्वयंभु विद्वान घोषित करते हैं, परोपकारिणी सभा को अपनी जागीर समझकर उसका एवं ऋषि के साहित्य का दुरुपयोग कर रहे हैं।

कई वर्षों से श्रीमद् दयानंद सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर ने परोपकारिणी द्वारा महर्षि दयानंद के कालजयी ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय संस्करण में लगातार किये जा रहे परिवर्तन की ओर ध्यान खींचा है। परोपकारिणी सभा से जुड़े विद्वानों से कई बार प्रार्थना भी की कि सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संस्करण, जो ऋषि ने घोषित कर प्रस्तुत किया था, उसमें कोई परविर्तन ऋषि के प्रति घोर अवमानना है। और फिर किसी लेखक के लेख में या ग्रंथ में किसी भी प्रकार का परिवर्तन करने का किसी को कोई अधिकार भी नहीं है। परोपकारिणी सभा के सभी स्वनामधन्य विद्वानों ने इस विषय पर आपस में बैठकर सत्य निर्णय करना तो दूर 'परोपकारिणी पत्रिका' में 'सत्यार्थ प्रकाश न्यास' से जुड़े कार्यकर्ताओं, विद्वानों को अभद्र भाषा में धौंसियाना शुरू कर दिया। आर्य समाज का एक छोटा सा कार्यकर्ता होने के कारण मैंने डॉ. सुरेंद्र प्रकाशजी को पत्र लिखकर एवं चलदूरभाष पर प्रार्थना की कि आर्य जगत के सभी विद्वान बैठकर 'सत्यार्थ प्रकाश' को वैचारिक कटु संग्राम से बचाए। परंतु उन्होंने एक न सुनी। डॉ. सुरेंद्रकुमारजी ने आर्य समाज के कार्यकर्ता और आर्य समाज संगठन के नेतृत्वकर्ताओं को ललकारा कि 'ऐरे-गैरे' भी 'सत्यार्थ प्रकाश' को यथारूप रखने की बात करने लगे। जब मेरे द्वारा 'सत्य ग्रहण करने के लिए शास्त्रार्थ चुनौती स्वीकार करें। श्री सुरेंद्र कुमार और डॉ. धर्मवीरजी को लिखा गया और वैदिक सार्वदेशिक प्राशित हुआ, तो तेरी भी चुप और मेरी भी चुप।' सत्यार्थ प्रकाश में परोपकारिणी सबा द्वारा निरंतर किये जा रहे परिवर्तन को देखकर सार्वदेशिक सभा के वरिष्ठ उप प्रधान एवं कार्यकारी अध्यक्ष श्री आनंदकुमार आर्य ने आर्य जगत के सभी विद्वानों एवं आर्य समाज के शीर्ष नेताओं से प्रार्थना कर आर्य समाज डिफेंस कॉलोनी, दिल्ली में सत्यार्थ प्रकाश की एकरूपता के लिए तीन दिन की वितार गोष्ठी बुलाई। उस सभा में वे सभी विद्वान एवं आर्य नेता आए, जो ऋषि के ऋषित्व के ग्राही हैं। परंतु वे नहीम आए, जो सत्यार्थ प्रकाश में अपनी विद्वत्ता से ऋषि की साधना को चेतावनी देकर द्वितीय संस्करण में लगातार परिवर्तन कर नए-नए संस्करण छाप रहे हैं। इस विचार गोष्ठी में तथाकथित स्वयंभू विद्वानों की पोल खुली, तो ये आग ववूला हो बैठे। परोपकारिणी पत्रिका-पाक्षिक प्रकाशनों में ऋषि संमत विचारों के विद्वानों को भद्दी-भद्दी गालियों से लेख लिखे जाने लगे। डॉ नरंद्र कुमार, डॉ धर्मवीरजी, डॉ. राजेंद्र विद्यालंकार, श्री विरजानंद दैवकरणिजी और यहाँ तक कि छद्म नाम से श्री आर्यमुनिजी ने अशोभनीय एवं भद्दी भाषा का प्रयोग कर अपनी झूठी मर्दानगी व्यक्त की। हमने कई बार इन सभी मोथरी कलम के कलमकारों से प्रार्थना की कि अच्छा हो, आपसे में आमने-सामने बैठकर सही निष्कर्ष पर पहुँचे। नाहक ऋषि के ग्रंथ को गंदा करने का दुःसाहस न करें। यहाँ यह भी बताना समीचीन होगा कि अब तक सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संस्करण का विश्व की समस्त भाषा में अनुवाद हो चुका है। हमारे जैसे ऋषिभक्त एवं आर्य कार्यकर्ताओं की प्रार्थना को तो ये झझरिया विद्वान अनिधिकार चेष्टा कहते हैं।

मेरी विनम्र प्रार्थना और सार्वदेशिक में प्रकाशित शास्त्रार्थ चुनौती पर डॉ सुरेंद्रकुमारजी ने 'परोपकारिणी' में प्रतिज्ञा प्रकाशित करायी कि हम शास्त्रार्थ की चुनौती स्वीकार करते हैं और भली-भाँति निभाएंगे भी। परंतु खेद। असत्य-धारणाओं को आत्मा का सम्बल बनाने वालों में इतना नैतिक साहस और आत्मबल कहाँ? जो 'सत्य ग्रहण' के लिए उद्धत हो सामने आ सके। डॉ. सुरेंद्रकुमारजी को अक्षर-ज्ञान ने इतना दम्भी बना दिया है कि 'झज्जर संप्रदायी' से विरक्त आर्य भद्र पुरुषों की तो 'आचार्य' डॉ. मीमांसक, शास्त्रीय पदधारिता को ये यह कहकर धिक्कारते हैं कि ये कैसे डॉ. मीमांसक, आचार्य हो गये। ये तो पढ़े-लिखे ही नहीं हैं। और फिर डॉ. सुरेन्द्रकुमारजी झज्जर संप्रदाय से विरत लोगों की योग्यता को धिक्कारे क्यों नहीं? जब डॉक्टर साहव मनुस्मृति के तथाकथित भाष्यकार बने, तो ऋषि दयानंद की योग्यता को धिक्कारा और स्मृति भाष्य में लिखा कि ऋषि दयानंद ने जो मनुस्मृति के श्लोक अपने ग्रंथों में लिखे हैं, वे भी प्रक्षिप्त हैं। ऋषि की बुद्धि इन प्रक्षिप्तों की ओर गई ही नहीं। अब मैं सुधर रहा हूँ। डॉ. सुरेंद्रजी ऋषिजी को इसलिए धमकाते हैं, क्योंकि ऋषिजी ने तो किसी विश्वविद्यालय से पीएचडी तो की ही नहीं थी।

हमने जून २०१२ में आर्य जगत के सभी विद्वानों को पत्र लिखकर प्रार्थना की थी आर्य समाज दयानंद नगर गाजियाबाद में, आप सभी आ जाएं और आमने-सामने बैठकर सत्यार्थ प्रकाश

की एकरूपता के लिए सत्य निष्कर्ष निकाल ले, उनके आने-जाने, रहने, भोजनादि की व्यवस्था हम स्वयं वहन करेंगे। इनमें अन्य विद्वानों के साथ डॉ. सुरेंद्रकुमारजी, डॉ. धर्मवीरजी, श्री दैवकरणिजी, राजेंद्र विद्यालंकारजी ने मुझसे चलदूरभाष पर कुछ बातें की, जो बिना सिर-पैर की थी, और राजनीति से प्रेरित थी। पर आपस में बैठने को तैयार नहीं हुए। परोपकारिणी सभा के विद्वानों को छोड़कर शेष आर्य जगत के विद्वान तैयार हो गए कि हम आर्य समाज दयानंद नगर, गाजियाबाद में आकर, आमने-सामने बैठकर सत्यार्थ प्रकाश की एकरूपता बनाने के लिए तैयार है। परंतु, खेद है कि परोपकारिणी के स्वयंभू विद्वान शास्त्रार्थ को उद्यत न हो सके। और अब फिर परोपकारिणी की पाक्षिक पत्रों में श्री विरजानंदजी दैवकरणि, जो ऋषि दयानंदजी को भी चुनौती दे चुके हैं, लगातार सत्यार्थ प्रकाश, द्वितीय संस्करण के हिमायती, विद्वान और आर्यकर्ताओं के विरुद्ध विष-वमन कर रहे हैं। किसी पाक्षिक में लिखते हैं, सत्यार्थ प्रकाश पर दयानंद के हस्ताक्षर है ही नहीं। ये तो मुंशी समर्थदानजी ने ऋषि के हस्ताक्षर किये हैं। एक लेख में तो उन्होंने यह भी लिखा है कि सत्यार्थ-प्रकाश उदयपुर नौलखा महल में लिखी ही नहीं गई थी। अब 'परोपकारिणी जनवरी द्वितीय २०१३' केपाक्षिक प्रकाशन में भी दैवकरणिजी का लेख छपा है 'सत्यार्थ प्रकाश विषयक कुछ असत्य वक्तव्य' सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (स्वामी अग्निवेश ग्रुप) की ओर से २०-२१ अक्तूबर २०१२ को कुलाची हंसराज मॉडल स्कूल, अशोक विहार-३, दिल्ली में अंतर्राष्ट्रीय आर्य प्रतिनिधि सम्मेलन हुआ था। इस सम्मेलन में २० अक्तूबर को सत्यार्थ सम्मेलन हुआ। उसमें जिन विद्वानों और नेताओं ने अपने विचार व्यक्त किये, उनके वक्तव्य आर्य जीवन (हैदराबाद के १२ नवंबर के अंक) में प्रकाशित हुए हैं। उनमें श्री वेदप्रकाशजी श्रोत्रिय, श्री सोमदेव शास्त्री, आर्यवेशजी, डॉ. महावीर मीमांसक, श्री आनंदकुमार आर्य, श्री अशोक आर्य तथा कृण्वन्तो विश्वमार्यम पत्रिका में आचार्य प्रमदेव मीमांसक का कथन नवीन अंक में छपा है। इन सभी वक्तव्यों और कथनों पर अपनी दंभीय भाषा में श्री दैवकरणिजी लिखते हैं- 'इसमें सत्यार्थ प्रकाश के तथाकथित विद्वानों एवं सार्वदेशिक सभा और उदयपुर न्यास के अधिकारियों ने सत्यार्थ प्रकाश विषयक विचार प्रस्तुत किये।' यहाँ इनके वक्तव्यों की समीक्षा की जाती है। श्री दैवकरणिजी ने अपनी विषभरी दंभीय कलुषित मानसिकता का परिचय, वक्तव्यों की समीक्षा के प्रारंभ में ही 'तथाकथित विद्वानों' कहकर दिया है। ऐसा लगता है कि झज्झर संप्रदायियों से अलग आर्य जगत में इन्हें और कोई विद्वान दिखता ही नहीं। और फिर दिखे भी क्यों? जब इस संप्रदाय के विद्वानों को दयानंद ही 'ऋषि' नहीं दिखता है, तो फिर अन्य विद्वान इनके नेत्र-दोष से इन्हें भुनगे दिखेंगे ही।

हम समीक्षक महोदय से पूछते हैं कि क्या आर्यजीवन में जो विद्वानों के अलग-अलग वक्तव्य छपे हैं, उन वक्तव्यों को श्री वेद प्रकाश श्रोत्रिय, ी सोमेश्वर शास्त्री, श्री महावीर मीमांसकजी, स्वामी आर्यवेशजी, श्री परमदेव मीमांसकजी, श्री आनंद कुमार आर्यजी, श्री अशोक आर्यजी ने लिखकर प्रेषित किये थे? हाँ। यह संभव है कि २० अक्तूबर के सत्यार्थ सम्मेलन को किसी आशुलिपिक ने लिखकर विभिन्न पत्रों को प्रकाशनार्थ भेजा हो। ऐसे में यह सुनिश्चित नहीं किया जा सकता कि वक्ता ने जो कुछ वक्तव्य दिया हो, 'ज्यों का त्यों या जैसे का तैसा लिखकर प्रकाशित हो जाए, इसमें यह संभव है कि वक्तव्य को नोट करने वाले के भाव, भाषा और विचार भी इसमें सम्मिलित हो जाए, परंतु आर्य जीवन, कृण्वन्तो विश्वमार्यम और वैदिक सार्वदेशिक में छपे व्यक्त विचारों पर श्री दैवकरणि ने खूब भड़ास निकालकर हृदय ढंडा किया है। गुरुकुलीय शिक्षा से प्राप्त भाषा और विद्या का भरपूर दुरुपयोग कर अपने झूठे दम्भ और अहम का प्रदर्शन किया है। न कोई वयोवृद्ध की शर्म न कोई बुद्धिवृद्ध का लिहाज।

२० अक्तूबर २०१२ को कुलाची हंसराज मॉडल स्कूल, अशोक विहार, दिल्ली में हुए सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन में मैं स्वयं भी सम्मिलित था। वहाँ उपस्थित सभी विद्वानों की और आर्य नेताओं को पीड़ा इस बात की थी, जैसे भी हो, सत्यार्थ प्रकाश द्वितीय संस्करण का रूप हर परिस्थिति में यथापूर्व एवं एकरूप बना है।

हाँ। श्री वेदप्रकाश श्रोत्रियजी ने अपने वक्तव्य में 'द्वितीय संस्करण में परोपकारिणी सभा द्वारा किये जा रहे परिवर्तन पर' प्रतिक्रिया यह कहकर दी कि परोपकारिणी को 'अपनी धरोहर' समझने वाले विद्वान यदि द्वितीय संस्करण में परिवर्तन इसलिए कर रहे हैं कि द्वितीय संस्करण में दयानंद ने जो गलतियाँ की हैं, उन्हें हम सुधार कर रहे हैं, तो मैं (श्रोत्रिय) इस मंच से यह घोषणा करता हूँ कि जो परोपकारिणी के विद्वान, द्वितीय संस्करण में परिवर्तन कर रहे हैं, वो आमने-सामने बैठकर हमसे शास्त्रार्थ करलें। श्री श्रोयिजी इन विद्वानों को पहले भी कई बार शास्त्रार्थ चुनौती दे चुके हैं। ऐसा लगता है कि शास्त्रार्थ नाम से तो इन सबकी घिग्गी बंधती है। मैंने भी इन विद्वानों से आमने-सामने बैठकर सत्य निर्णय के लिए कई बार प्रार्थना की है। परंतु परोपकारिणी के विद्वान 'परोपकारिणी पत्रिका' को जो परोपकार के उद्देश्य को लेकर चली थी, पर कलम की नकली लंगोट बाँधकर बुद्धि-क्षेत्र में लाकर उसे थर-थर कंपा रहे हैं।

आदरणीय, दैवकरणिजी । आप तो अद्वितीय विद्वान हैं। फिर अदम्य साहस से सत्य र्णिय के लिए आगे आकर शास्त्रार्थ चुनौती स्वीकार क्यों नहीं करते। मान्यवर नदी के दूसरे पार खड़े होकर गुर्राना वीरता नहीं।

क्या युद्ध पाप है?

- पं. इंद्र विद्या वाचस्पति

(गतांक से आगे)

धर्मनाश

अर्जुन की तीसरी युक्ति यह है कि युद्ध द्वारा कुल का नाश हो जाएगा, कुल के नाश से धर्म का नाश हो जाएगा, जिससे हम सब पाप के भागी बन जाएंगे। उसने कृष्ण से कहा-

'अहो, हम बड़ा भारी पाप करने के लिए तैयार हुए हैं, जो हमने राज्य-सुख के लोप से स्वजनों को मारने का निश्चय किया है।'

नाश की अर्जुन को बहुत चिंता है। इस कारण कृष्ण ने उसे थोड़ा-सा फटकारना आवश्यक समझते हुए कहा है,

'जिस चीज चीज की चिंता नहीं करनी चाहिए, उसकी तू चिंता करना ही और बात करना है। बड़े अकलमंदों की तरह हे अर्जुन मरे, हो या जीवित की पंडित लोग कभी चिंता नहीं करते।

चिंता की बात भी क्या है। यह संसार इतना विशाल है कि एक व्यक्ति, एक हजार व्यक्ति या एक करोड़ व्यक्तियों के रहने या न रहने से इसके पाप-पुण्य के समूचे भेद में कोई भेद नहीं आता। यह मनुष्य की अल्प दृष्टि है कि वह अपने को ही संसार का केंद्र समझता है, और डरता है कि यदि मैं या मेरे आस-पास के व्यक्ति मर गये या हिल गये, तो सारा ब्रह्मांड विचलित हो जाएगा। बड़े से बड़ा व्यक्ति भी इतना बड़ा नही है कि वह संसारी मनुष्य जाती के भाग्यों का निर्णायक बन सके, या भाग्यों को समझ भी सके। इस कारण मनुष्य का कर्तव्य है कि वह संसार को और मनुष्य जाति को भगवान पर, या उनके अपने समूहरूपी भाग्यों पर छोड़कर अपने कर्तव्यों का पालन करें। उसे अपने धर्म का पालन करना चाहिए। अन्यों की सुध भगवान ले लेंगे। जो मनुष्य संसार-हित या कुल-हित की चिंता में अपने धर्म को छोड़ देता है, वह संसार और कुल को क्या बचाएगा? वह तो अपने आपको ही खो देगा। भगवान अर्जुन से कहते हैं- अपने धर्म पर दृष्टि रखते हुए तुझे कर्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। याद रख धर्मानुसार युद्ध से अधिक कल्याणकारी कार्य क्षत्रिय के लिए कोई भी नहीं है। कौरवों ने पांडवों का राज ले लिया है। उन लोगों ने पांडवों के साथ घोर अन्याय किये। उन्हें कई बार मारने का यत्न किया, उनकी पत्नी द्रौपदी को सभा में मारने का यत्न किया। उनकी पत्नी द्रौपदी को सभा में अपमानित किया। उन्हें पशुओं की तरह तिरस्कृत कर राज्य से घर-बार से निकाल दिया। ऐसे अत्याचारियों से अपने राज्य को छिनना और अत्याचारियों को दण्ड देना क्षत्रियों का परम धर्म है। श्रीकृष्ण का यही उपदेश है कि हे अर्जुन संसार के धर्म की चिंता मत कर, धर्म अपनी रक्षा आप कर लेगा। तू अपने धर्म की चिंता कर। यदि तू अपने धर्म का पालन न कर सकेगा, तो तेरा ही सर्वनाश हो जाएगा। भगवान कहते-

'तेरे लिए तो स्वर्ग का द्वार मानो स्वयं खुल गया है। इस प्रकार का युद्ध क्षत्रियों के लिए कल्याण का कारण होता है, क्योंकि वह क्षत्रियों को अपना धर्म पालन करने का अवसर देता है। उन्हें मुँह माँगी मुराद मिल जाती है।'

आगे भगवान अर्जुन को समझाते हैं-

'यदि तू धर्मानुकूल इस युद्ध को नहीं करेगा, तो न केवल अपने धर्म को ही खोएगा, अपनी कीर्ति को भी खोकर पाप का भागी बनेगा'

अंत में भगवान ने अर्जुन को निम्नलिखित शब्दों में कर्तव्य का उपदेश दिया है-

'यदि तू युद्ध में मारा गया, तो स्वर्ग का अधिकारी बन जाएगा, और यदि जीत गया तो पृथ्वी पर शासन करेगा। इस कारण हे कौन्तेय तू युद्ध करने का दृढ निश्चय करके आगे बढ़'

'सुख और दुख, लाभ और हानि, जय और पराजय को एक समान मानकर तू युद्ध के लिए खड़ा हो जा। इससे तुझे कोई पाप नहीं लगेगा।'

अहिंसात्मक उपाय

'युद्ध करने में पाप है' इस उक्ति का भगवद्गीता में जिना सुन्दर उत्र दिया है, उतना सुन्दर कहीं नहीं मिल सकता। पाप है अपने धर्म का पालन करने में, अपना अधिकार दूसरे के कब्जे से छीनने या आततायी को दण्ड देने में कोई पाप नहीं। यही धर्म का सार है। युद्ध के विरुद्ध अंतिम युक्ति यह दी जा सकती है कि यदि सुख प्राप्ति का सरल उपाय हो, तो कठिन उपाय काम में क्यों लाया जाय? दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि यदि सीधी उंगली से घी निकलता हो, तो उन्हें व्यर्थ क्यों मोड़ा जाए? अर्जुन ने दबे शब्दों में वह युक्ति भी दे डाली। उसने कहा-

'मैं उनके आक्रमण का कोई उत्तर न दूँ। उनके हाथों में शस्त्र हो और मैं शस्त्रहीन रहूँ। यदि इस दशा में धृतराष्ट्र लोग मुझे मार भी डालें, तो उससे मेरा अधिक कल्याण होगा।

इस युक्ति का वर्तमान नाम 'निष्क्रिय प्रतिरोध' है। अर्जुन दो सुखों को तोलकर उनमें शस्त्र-त्याग से पैदा होने वाले सुख को अधिक भारी करार देता है और कृष्ण से कहता है कि जब मुझे निष्क्रिय प्रतिरोध द्वारा सरलता से श्रेय प्राप्ति हो सकती है, तो मैं युद्ध रूपी कठिण उपाय को काम में क्यों लाऊँ, विशेषतः उस दशा में जबकि हमारी

जय भी संदिग्ध है। अर्जुन ने कहा- हमें मालूम नहीं कि हममे से कौन बलवान है। क्या मालूम, हम जीतें या वे जीतें?' इस हेत्वाभास का उत्तर भगवान ने बड़े सुन्दर शब्दों में दिया है।

अर्जुन का यह कहना है कि यदि मैं हथियार छोड़कर गर्दन झुका दूँगा और मरने को उद्यत हो जाऊंगा, तो उससे 'क्षेम' अर्थात कल्याण हो जाएगा, सर्वथा निर्मूल था क्योंकि मनुष्य-प्रकृति केवल निष्क्रिय प्रतिरोध से नहीं बदल सकती। भगवद्‌गीता में कहा है- 'ज्ञानवान भी अपनी प्रकृति के अनुसार ही कार्य करता है। प्राणी स्वभाव के अनुसार बरतते हैं, उसमें कृत्रिम रुकावट क्या करेगी? जब प्रकृति इतनी बलवती है, तो क्षात्रधर्म को छोड़कर सिर झुका देने से कौरवों में कोई परिवर्तन नहीं आ सकता। जब वह नहीं बदल सकते, तो उनके अत्याचार और पाप को ही जीते रहने देना क्षत्रिय धर्म के सर्वथा विरुद्ध होने के कारण महापाप है।

यह भी भगवान ने बतलाया कि पाप अपने धर्म का पालन करने में है। वह कहते हैं-

'यदि तू इस इस धर्मानुकूल संग्राम में नहीं लडेगा, तो अपने धर्म और कीर्ति को छोड़कर पाप का भागी बनेगा। सब लोग तेरी बदमानी करेंगे और यह निश्चित बात है कि यशस्वी आदमी का बदनाम होने से मर जाना बेहतर है।'

इस आक्षेप का कि कौरवों को मारने का पाप हमें लगेगा, कृष्ण ने अपने को विधाता के विधान का प्रतिनिधि मानते हुए इस प्रकार उत्तर दिया है-

'इस कारण हे अर्जुन, तू अस्त्र धारण करके यश प्राप्त कर, शत्रुओं को जीतकर विशाल राज्य का उपभोग कर, इन्हें मैंने पहले ही मार डाला है, तुझे तो इनके नाश का निमित्त मात्र बनना पड़ेगा। द्रोण, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण आदि वीर योद्धाओं को मैं मार चुका हूँ। चिन्ता मत कर। मेरे मारे हुओं को मारने से तुझे पाप लगेगा। युद्ध करेगा, तो तू शत्रुओं पर विजय प्राप्त करेगा।'

अत्याचारी और दस्यु अपने कर्मों से आप ही मर जाते हैं। युद्ध में उन्हें पराजित करने वाला योद्धा तो निमित्त मात्र होता है। पापियों को दण्ड देने और मारने से कोई पाप नहीं लगता। इसके विपरीत यदि अत्याचारी दस्यु को उसके कुकर्मों का दण्ड न दिया जाय, और उसके हाथ से बलात्कार द्वारा प्राप्त की हुई न जाए, तो उन व्यक्तियों को पाप लगता है, जो शक्ति होते हुए भी धर्म की रक्षा नहीं करते। अत्याचार करना जितना बड़ा पाप है, अत्याचार को सहना उससे भी बड़ा पाप है, क्योंकि अत्याचार करने वाला इसी कारण अत्याचार कर सकता है कि कमज़ोर आदमी अत्याचार को बर्दाश्त करता है।

इस प्रकार भगवद्‌गीता में नपुंसक फिलासफी का पूरा उत्तर दिया गया है। आश्चर्य यह है कि हज़ारों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी नपुंसकता की पुष्टी में कहीं भूल से और कहीं जान-बूझकर उन्हीं उक्तियों का प्रयोग किया जाता है, जो अर्जुन ने अपने क्लैब्य के पक्ष में दी थी, और जिनका इतना सुन्दर समाधान कृष्ण ने कर दिया था।

हिंसा पाप है, इसका अभिप्राय यह है कि आपने सुख के लिये दूसरों को कष्ट देना पाप है। अपराधी के सुधार और उससे लोक की रक्षा के लिये अपराधी को दण्ड देना पाप नहीं है, क्योकि उस दण्ड-प्रयोग का उद्देश्य परपीड़न नहीं है।

इसी प्रकार आततायी या अत्याचारी के आक्रमण को रोकना और उसके रोकने के लिए आवश्यक हो तो उसे और उसके सहायकों को मार डालना पाप नहीं है, क्योंकि उसे मारने का उद्देश्य दूसरे को दुःख देना नहीं, बल्कि अत्याचार का प्रतिरोध करना है।

सब तरह की हिंसा पाप है या नहीं, इस प्रश्न का उत्तर एक दूसरे प्रश्न के उत्तर पर अवलम्बित है। वह प्रश्न यह है कि आप हिंसा की क्या व्याख्या करते हैं? यदि आप परपीडन पर मात्र का नाम हिंसा रखते हैं और उसकी मूल प्रेरक भावना पर कोई ध्यान नहीं देते, तो कहना पड़ेगा कि सब हिंसा पाप नहीं है, केवल वहीं हिंसा पाप है, जिसका उद्देश्य परपीड़न नहीं है। इसी प्रकार आततायी या अत्याचारी के आक्रमण को रोकना और उसके रोकने के लिए आवश्यक हो, तो उसे और उसके सहायकों को मार डालना पाप नहीं, बल्कि अत्याचार का प्रतिरोध करना है।

सब तरह की हिंसा पाप है या नहीं, इस प्रश्न का उत्तर एक दूसरे प्रश्न के उत्तर पर अवलंबित है। वह प्रश्न यह है कि आप हिंसा की क्या व्याख्या करते हैं? यदि आप परपीड़न मात्र का नाम हिंसा रखते हैं, और उसकी मूलभूत प्रेरक भावना पर कोई ध्यान नहीं देते, तो कहना पड़ेगा कि सब हिंसा पाप नहीं है, केवल वही हिंसा पाप है, जिसका उद्देश्य दूसरे को दुख देकर स्वयं सुख प्राप्त करना मात्र हो। परंतु यदि आप केवल उस परपीडन का नाम हिंसा रखते हैं, जिसका उद्देश्य केवल आत्मसुख हो, तो हमें यह मानने में कोई आपत्ति नहीं कि हिंसा पाप है। युद्ध के सम्बन्ध में भी आप इसी विचार -परम्परा को काम में ला सकते हैं, जिस युद्ध का उद्देश्य केवल आत्मसुख की प्राप्ति के लिए दूसरे को कष्ट देना हो, वह हेय है। परन्तु जो युद्ध किसी आततायी के नाश के लिए लड़ा जाए, अथवा जिसका उद्देश्य अपने उचित अधिकारों की रक्षा हो, वह युद्ध धर्म है, इस कारण उस युद्ध में भाग लेना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। जो उसमें भाग नहीं लेता और लंगड़ी तूली और कल्पित युक्तियों के आधार पर मैदान से भागना चाहता है, वह घोर पाप का भागी होता है।

समाप्त

महर्षि दयानन्द क्या चाहते थे?

- ओमप्रकाश पुरुषार्थी

महर्षि दयानंद क्या चाहते थे? इसका पूर्ण तथा स्पष्ट उत्तर तो महर्षि द्वारा लिखित ग्रंथों की प्रत्येक पंक्ति अथवा शब्दों के अध्ययन तथा मनन करने से ही मिल सकता है। उस असीमित ज्ञान-सागर को कुछ पंक्तियों में व्यक्त करना सर्वथा असंभव है। हाँ उसकी ओर संकेत मात्र किया जा सकता है। प्राणिमात्र का कल्याण यदि महर्षि के लक्ष्य को सार रूप में कहा जाय, तो दृढता के साथ यह कहा जा सकता है कि वह प्राणि मात्र का कल्याण चाहते थे। उनकी भावनाओं को किसी एक जाति सम्प्रदाय तथा देश के साथ जोड़ना उनके साथ घोर अन्याय करना है। बहुत से अज्ञानी लोग आर्य जाति के उत्थान-पतन के संबंध में समय-समय पर उनकी वेदनाओं के आधार पर उन्हें एक देश, जाति अथवा संप्रदाय के साथ बाँधने की धृष्टता करते हैं, परंतु उन्हें ज्ञान होना चाहिए कि उनकी इस वेदना का एक ही कारण था, कि सृष्टि के आदिकाल में ईश्वर ने जिस देश अथवा जाति को अपना ज्ञान प्राणि मात्र के कल्याणार्थ दिया, उसकी दयनीय अवस्था उनसे देखी नहीं गई, और उनका यह दृढ मत था कि यदि ईश्वरीय ज्ञान के आधार पर संसार का कल्याण करना है, तो उन्हें इसका प्रारम्भ आर्य जाति तथा आर्यावर्त देश से ही करना होगा। क्योंकि यही जाति आज भी इस ज्ञान के समीप है।

संसार का कल्याण ही महर्षि का लक्ष्य था। इसका स्पष्ट तथा प्रबल प्रमाण यह है कि महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना जिस दृढ आधार-शिला पर की, वह आधारशिला आर्य समाज के १० नियम है। इन नियमों में एक भी ऐसा नहीं है, कि जो किसी देश अथवा जाति से संबंधित हो, अपितु उन्होंने छठे नियम में स्पष्ट कर दिया है कि - 'संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है। अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।' महर्षि द्वारा भिन्न मत-मतान्तरों और मुख्यतः इस्लाम तथा ईसाई धर्म के खंडन को देखकर लोग उन्हें सांप्रदायकि समझने की बहुधा भूल किया करते हैं। परंतु उन्हें ज्ञात होना चाहिए, कि इन मतों की अपेक्षा उन्होंने हिंदुओं के मत-मतान्तरों तथा अन्ध विश्वासों का कहीं अधिक तीव्रता तथा कठोरता के साथ खंडन किया है। इन मतों के खंडन के पीछे महर्षि की जो मानव कल्याणकारी भावना छिपी थी, वह उन्हीं के शब्दों में पढ़ने योग्य है। अर्थात-

'.. यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य के निर्णय के लिए सब मतों के विषय का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान होवे। इससे मनुष्य को परस्पर विचार करने का समय मिले और एक-दूसरे के दोषों का खंडन कर गुणों का ग्रहण करें। न किसी अन्य मत पर झूठ-मूठ बुराई अथवा भलाई लगाने का प्रयोजन है, किंतु जो-जो भलाई है, वही भलाई और जो-जो बुराई है, वही बुराई सबको विदित होवे। न कोई किसी पर झूठ चला सकें और न सत्य को रोक सके और सत्यासत्य विषय प्रकाशित किए पर भी इच्छा हो, वह न माने वा माने किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता और यही सज्ज़नों की रीति है कि अपने वा पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर दोषों का त्याग करें और हठियों का हठ, दुराग्रह, न्यून करें-करावें, क्योंकि पक्षात्ताप से क्या-क्या अनर्थ जगत में न हुए और न होते हैं। सच तो यह है कि अनर्थ जगत में न हुए हैं और होते है। सच तो यह है कि इस अनिश्चित क्षण भंगुर जीवन में पराई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अन्य को रखना मनुष्यपन से बाहर है। ... यह लेख हठ दुराग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वाद-विवाद और विरोध घटाने के लिए किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ।'

इसी सद्भावना को सम्मुख रखकर महर्षि ने देहली दरबार के समय सर सैयद अहमद खाँ के सहयोग से संसार का सर्व प्रथम सर्व धर्म सम्मेलन बुलाया था, ताकि सच्चे मानव धर्म का निर्णय कर संसार का कल्याण किया जा सके। परंतु शोक कि स्वार्थान्ध लोग महर्षि की भावना का आदर न कर सके।

मानव-मात्र के कल्याण तक ही महर्षि सीमित रहे हों, सो बात नहीं है। अपितु सर्व प्रथम यदि उनकी लेखनी से कोई शब्द निकला, तो वह मूक प्राणि जगत के कल्याणार्थ 'गो-करुणा निधि के रूप में निकला। कितनी वेदना व दर्द भरा था उनके हृदय में, इन असहाय पशुओं के लिए, वह निम्न पंक्तियों में देखिए -

'गो आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है।' हे मांसाहारियों। तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का भी मांस छोड़ोगे या नहीं। हे परमेश्वर। तू क्यों इन पशुओं पर, जो कि बिना अपराध मारे जाते हैं, दया नहीं करता? क्या उन पर तेरी प्राति नहीं है? क्या इनके लिए तेरी न्याय सभा बन्द हो गई है? क्यों उनकी पाड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं ध्यान नहीं देता? और उनकी पुकार नहीं सुनता? क्यों इन मांसाहारियों की आत्माओं में दया-प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता?

चतुर्मखी क्रांति

मानव समाज का वैदिक संस्कृति के आधार पर नवनिर्माण करना महर्षि का एक अन्य लक्ष्य था। इसके लिए समाज के धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक सभी क्षेत्रों में क्रांति करने के

वह पक्षपाती थे। एकांगी क्रांति उनकी दृष्टि में निरर्थक थी। इसलिए उन्होंने अपने जीवनकाल में ही जहाँ एक ओर विधर्मियों से शास्त्रार्थ किये, तो दूसरी ओर राजाओं को उनके धर्म का ज्ञान कराने की चेष्टा की। अपने घोषणा-पत्र 'सत्यार्थ प्रकाश' के छटे समुल्लास में उन्होंने राजनीति पर ही प्रकाश डाला। जो व्यक्ति आज आर्य समाज को केवल धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित रखाने की चेष्टा करते हैं, वे सचमुच मर्हा, के साथ विश्वासघात करते हैं।

समाज के धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में किस प्रकार की क्रांतिं महर्षि चाहते थे, वह निम्न प्रकार है-

धार्मिक क्रांति

महर्षि का विश्वास था कि जिस प्रकार अग्नि, पाणी आदि वस्तुओं का एक धर्म होता है, उसी प्रकार मानव-मात्र का एक ही धर्म हो सकता है। उनकी दृष्टि में वैदिक धर्म ही वह धर्म है, जिसे संसार के समस्त मानवों को अपनाना चाहिए। इस क्षेत्र के लिए जो क्रांति-यंत्र उन्होंने निर्धारित किया, वह यह था कि- 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।' निःस्वार्थ भावना से सत्य व विद्या का प्रसार तथा शास्त्रार्थ उनकी इस क्रांति के दो महान शस्त्र हैं। जिसके सहारे यह क्रांति होनी संभव है।

सामाजिक क्रांति महार्षि ऐसे आदर्श समाज की रचना चाहते थे कि जो पृथ्वी को अपनी माता और ईश्वर को अपना पिता समझे और विश्व-बन्धुत्व की भावना से ओत-प्रोत हो, रंग-भेद, मत-मतान्तर, भौगोलिक तथा आर्थिक संकीर्ण सांप्रदायिकता से जो दूर हो, और जिसमें सब मनुष्य सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहें और प्रत्येक हितकारी नियम के पालन में सब स्वतंत्र रहे।

समाज के वर्तमान आर्थिक, वर्गीकरण के वह सख्त विरोधी थे और मनुष्यों के गुण, कर्म, सभा पर आधारित वर्गीकरण के वह पक्षपाती थे। अतः उनकी सामाजिक क्रांति का मूलमंत्र था, 'वर्णाश्रम- व्यवस्था की पुनः स्थापना' और आदर्श था 'संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम.....।' आदर्श समाज के निर्माणार्थ वह मनुष्य निर्माण पर अधिक बल देते थे। इसलिए उन्होंने 'संस्कार विधि' ग्रंथ का निर्माण किया।

आर्थिक क्रांति

अन्याय, अत्याचार तथा शोषण के आधार पर धनोपार्जन को महर्षि महापाप समझते थे और श्रमिकों के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा और प्रेम था और उनके साथ वह उचित व्यवहार करने के पक्षपाती थे। उदाहरणार्थ सत्यार्त प्रकाश के पृष्ठ १०४ पर महर्षि लिखते हैं कि 'राजाओं के राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं और राजा उनका रक्षक है। जो (कर के रूप में) भी धन लेवे, उस प्रकार से लेवे कि जिससे किसान आदि खाने-पीने और धन से रहित होकर दुःख न पावे।'

महर्षि की आर्थिक क्रांति का मूलमंत्र था, प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किंतु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति मझनी चाहिए। गऊ उनके आर्थिक ढाँचे का मूलाधार थीं और वह बड़ी मशीनों की अपेक्षा छोटी मशीन अथवा गृह उद्योग के पक्षपाती थे। पूँजी का विकेंद्रीकरण करना उनका लक्ष्य था। प्रत्येक राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी हो, ऐसी उनकी धारणा थी। अतः स्वदेशी वस्तुओ को धारण करने के वह पक्ष में थे। उदाहरणार्थ सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि लिखते हैं कि- 'जब स्वदेश ही में स्वदेशी लोग व्यवसाय नहीं करते और परदेशी, स्वदेशी में व्यवहार करें, तो बिना दारिद्रय और दुःक के दूसरे कुछ भी नहीं हो सकता।'

राजनीतिक क्रांति

राजनैतिक क्षेत्र में महर्षि प्रजातंत्र के पक्षपाती और एकतंत्र के विरोधी थे। परंतु महर्षि का प्रजातंत्र वर्तमान प्रजातंत्र से सर्वथा भिन्न था।उनके प्रजातंत्र में योग्य व्यक्ति ही चुनाव के लिए खड़ा हो सकता है और चुनने का प्रत्येक को अधिकार होता हुआ भी योग्यतानुसार वोटों का मूल्य भिन्न-भिन्न होना चाहिए। उनकी सृष्टि में चारों वेदों के सदाचारी विद्वान की सम्मति सैकड़ों मुखों से अधिक थी। सत्यार्थ प्रकाश के पृष्ठ ६१ पर महर्षि लिखते हैं कि 'यदि एक अकेला सब वेदों को जाननेहारा द्विजों में उत्तम संन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे, वही धर्म श्रेष्ठ है, क्योंकि अज्ञानियों के सहस्त्र लाखों-करोडों मिल के व्यवस्था करें, उसको कभी नहीं मानना चाहिए।

महर्षि साम्रज्यवाद के घोर विरोधी थे। परंतु विश्व शांति के निमित्त एक विश्व सरकार के वह पक्षपाती थे। उदाहरणार्थ महर्षि सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ १४५ पर लिखते हैं- 'चाहे कोई कितना ही कहे, परंतु जो स्वदेशीय राजा होता है अथवा मत-मतांतर के आग्रह रहित अपने और पराए का पक्षपात शून्य प्रजा के माता-पिता के समान कृपा दया और न्याय के साथ भी विदेशियों, का राज्य सुखदायी नहीं हो सकता।' दूसरे स्थान पर वह लिखते हैं कि मनुष्य को दो प्रयोजन सामने रखकर उसकी पूर्ति के लिए सब व्यवहार करना चाहिए। पहला यह कि अत्यन्त पुरुषार्थ करके शरीर को स्वस्थ रख के वह चक्रवर्ती राज्यरूपी श्री का सम्पादन करें और दूसरा यह कि सब विद्याओं को पढ़कर सब जगह उनका प्रचार करें।'

विदेश नीति में वह सबकेसाथ प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य व्यवहार के समर्थक थे।'

इस प्रकार महर्षि वर्तमान राजनीति का वैदिकीकरण करना चाहते थे। इसलिए वह राजाओं को अपने समीप लाने की भरक चेष्टा कर रहे थे और इसी प्रयत्न में उन्हें अपना बलिदान देना पड़ा।

अतः आशा है आर्यजन आर्य समाज को केवल विधवा विवाह, छुत-छात, मूर्ति पूजा खंडन, साप्ताहिक सत्संगों तक ही सीमित न रखकर महर्षि की इस चतुर्मुखी योजना को प्राणीमात्र के कल्याणार्थ क्रियात्मक रूप देने का साधन बनाएंगे। अन्यथा वह आर्य समाज को किसी भी अवस्था में प्रगति प्रदान न कर सकेंगे।

संगठन-सूक्त के पाठ मात्र से संगठन नहीं हो सकता

- इं. आदित्यमुनि वानप्रस्थ

आर्य समाज अपने जन्मकाल (१० अप्रैल, १८७५ ई.) से ही अपने साप्ताहिक सत्संगों में ऋग्वेद के अंतिम संगठन-सूक्त (१०-१९१-१-४) का अब तक निरंतर पाठ करता चला आ रहा है। ऐसा करते हुए उसे १३८ वर्ष हो गए, परंतु मर्ज बढ़ता ही गया। ज्यों-ज्यों दवा की वाली उक्ति ही चरितार्थ होती गई।

कहाँ तो इन चार मंत्रों में यह कहा गया था-

हे प्रभो ! तुम शक्तिशाली बनाते हो सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिए धन वृष्टि ो।।१।।
प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम कर्तव्य के मानी बनो।।२।।
हों विचार समान सबके चित्त मन सब एक हो।
ज्ञान देता हूँ बराबर भोग्य पा सब नेक हों।।३।।

हों सभी के दिल तथा संङ्कल्प अवरोधी सदा।
मन भरें हो प्रेम से, जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।४।

परंतु साके आर्यसमाजी जगत में जाकर देख लीजिए, आपको कहीं भी परस्पर प्रेम से मिलकर चलने और बोलने वाले, एक समान विचार वाले, एक से चित्त-मन वाले, अविरोधी सङ्कल्प वाले, परस्पर प्रेम से भरे मन वाले दो व्यक्ति भी नहीं मिलेंगे। कारण क्या है? वही 'योऽस्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।' में वर्णित द्वेष्टि और द्विष्मस्तम की भावना की प्रचुरता, जो प्रत्येक आर्यसमाजी को अपने दैनिक सन्ध्या-वन्दन से मिलती है। इसमें अनका एक धर्मग्रंथ- वेद और एक आचार्य - 'दयानन्द' का अनुयायी होना भी सहायता नहीं कर पाता है। यही कारण रहा है कि ये दोनों एक होने पर भी आर्य समाज की स्थापना के कुछ वर्षों बाद ही १९वीं शताब्दी का अन्त होते-होते आर्य समाज कॉलेज और गुरुकुल पार्टी के रूप में विभक्त हो गया, जो आज तक पुनः एक नहीं हो पाया है। अगले सौ वर्षों के बाद पुनः एक ओर विभाजन २०वीं शताब्दी के अन्त से आरम्भ होकर २१वीं शताब्दी के प्रारंभ में हो गया, जिसके ध्वज वाहक बने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्कालीन प्रधान कैप्टन देवरत्न आर्य। इनके सम्बंध में कभी हमने आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ, नागपुर के मासिक मुखपत्र 'आर्यसेवक' के सितम्बर २००४ के अङ्क में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का त्रैवार्षिक निर्वाचन 'चोरी-चोरी, चुपके-चुपके' शीर्षक देकर केवल कैप्टनजी के चित्र के साथ उनकी प्रतिज्ञा और अपनी संक्षिप्त सी टिप्पणी कि 'अस्तु जो कुछ हुआ, वह लिखने योग्य भी नहीं है।' शेष पृष्ठ कोरा छोड़ दिया था। हमारे इस सम्पादकीय ने पाठकों और विद्वानों की पर्याप्त सराहना अर्जित की थी और कुछ विद्वानों ने तो व्यक्तिगत रूप से मुझे इस संघर्ष में अपना सक्रिय समर्थन देने का आश्वासन भी दिया था, परन्तु इसे उन्होंने बाद में भी निभाया नहीं।

कैप्टनजी ने जैसे किया, वैसा ही भोगा

कैप्टन देवरत्न आर्य के कार्यकारी प्रधान डॉ. स्वामी सत्यम ने ३० नवम्बर २००४ को एक कार्यालयीन आदेश निकालकर आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ, नागपुर को ही भङ्ग कर दिया, जिसके प्रधान आचार्य जगद्देव, नैष्ठिक और मंत्री पं. लक्ष्मीनारायण भार्गव थे। मैं उस समय इस सभा के मुख पत्र 'आर्यसेवक' का प्रधान सम्पादक था। इस आदेश में उन्होंने लिखा था कि - 'आर्यसेवक सितम्बर २००४ के अङ्क में पृष्ठ-७ पर एक शीर्षक प्रकाशित किया गया- सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का त्रैवार्षिक निर्वाचन- 'चोरी -चोरी, चुपके-चुपके' इस प्रकाशन पर आर्य समाज द्वारा बहुत रोष व्यक्त किया गया। इसकी विस्तृत चर्चा सार्वदेशिक सभा की अंतरङ्ग बैठक में आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ के प्रधान आचार्य जगद्देवजी भी उपस्थित थे, जिन्होंने स्वयं इस प्रकाशन से असहमति व्यक्त करते हुए सम्पादक के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही का वचन दिया था। सार्वदेशिक सभा की अंतरङ्ग बैठक में पारित प्रस्ताव के अनुसार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि के प्रधान एवं मंत्री को सर्व सम्मति से यह अधिकार दिया गया कि यदि आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ १५ दिन के भीतर कार्यवाही नहीं करती, तो वे स्वयं आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ के विरुद्ध उचित कार्यवाही करें।'

इसके अलावा भी 'आर्यसेवक' में प्रकाशित कतिपय अन्य बातों और सभा की कुछ अन/य गतिविधियों को लेकर उक्त सभा भङ्ग कर दी गई और श्री सत्यवीर शास्त्री (अमरावती) को तदर्थ प्रधान और श्री अनिल आर्य (नागपुर) को तदर्थ मंत्री आदि बनाकर उन्हें सभा कार्यालय में २ दिसम्बर २००४को तब प्रविष्ट करा दिया गया, जब हम सब नवनिर्वाचित पदाधिकारी उस नि गुरुकुल होशंगाबाद के वार्षिकोत्सव के संबंध में वहाँ उपस्थित थे।

आगे तीन महीने भी नहीं बीत पाए थे कि दिल्ली में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय पर २८ फरवरी २००५ को स्वामी अग्निवेश (प्रधान) और प्रो. कैलाशनाथ सिंह (मंत्री) ने अधिकार कर लिया और कैप्टन देवरत्न आर्य के नेतृत्व वाली सभा को बाहर का रास्ता दिखा दिया। तब इस नेतृत्व ने भङ्ग आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ को पुनः बहाल करते हुए ३ मार्च, २००५ को लिखा कि - 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली आपके पत्रों से इस तथ्य पर पहुँची है कि आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ आपके प्रधानत्व में सुचारू रूप से कार्य कर रही थी किन्तु कुछ लोगों ने तथ्यहीन व मिथ्या दोषारोपण कर आपकी सभा के कार्यों में बाधा पहुँचाने की कोशिश की। हम यह मानते हैं कि आपकी सभा ने आपके मासिक पत्र 'आर्य सेवक' में आर्य समाज के दस नियमों के विरुद्ध जान-बूझकर कोई लेख प्रकाशित नहीं किया, न ही कोई आर्थिक अनियमितता की गई है। अतः मैं विधि सम्मत निर्वाचित सर्वाधिकार सम्पन्न सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का प्रधान होने के नाते अधोलिखित रूप से आदेशित करता हूँ, जिसका तत्काल प्रभाव से पालन किया जाए।'

तब से दिल्ली में दो नहीं, अपितु बाद में तीन-तीन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाएं और

नागपुर में दो आर्य प्रतिनिधि सभाएं वन गई, जो आज तक यथावत वनी हुई हैं और दोनों ही सभाओं के मुखपत्र - साप्ताहिक 'सार्वदेशिक' और मासिक 'आर्यसेवक' कुछ दिन और चलकर वन्द हो गई है और न तो कैप्टन देवरत्न आर्य ही अपने सभा कार्यालय में दोवारा प्रवेश पा सके और न आचार्य जगदेव नैष्टिक ही। अव कैप्टन देवरत्नजी तो स्वर्गवासी हो चुके हैं। उनके मंत्रीजी तो उनके जीवनकाल में ही उनका साथ छोड़ चुके थे, वाद में इन दोनों ने ही अपना-अपना दूसरा प्रधान और मंत्री वना लिया, जिससे तीन-तीन सार्वदेशिक आर्य प्रमतिनिधि सभाएं वन गई, जिसका मुकदमा पिछले नौ साल से चल रहा है तथापि परस्पर एकता अभी कोसों दूर है। इस प्रकार जिसने जैसा किया, उसने वैसा ही भोगा।

मुझे लगता है कि यह विभाजन अव तक स्थायी रूप ले चुका है क्योंकि इसका आधार उपर्युक्ता नुसार एक पक्ष का तो अत्यंत कट्टर होना और दूसरे पक्ष का बहुत कुछ उदार होना है, जो आगे भी बने रहना है। लेकिन स्वतंत्र और संप्रदाय निरपेक्ष भारत राष्ट्र में भविष्य तो उदार-पक्ष का ही उज्वल कहा जा सकता है।

सत्यार्थ प्रकाश विवाद

'सत्यार्थ प्रकाश' आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद की प्रमुख सैद्धांतिक कृति है। इसे उन्होंने अपने जीवनकाल में ही शुद्ध करके द्वितीय बार छपवाना आरंभ कर दिया था। तव इसके सम्पादक और प्रकाशक ऋषि दयानंद के विश्वस्त सहयोगी मुंशी समर्थदान (प्रबंधकर्ता, वैदिक यंत्रालय, प्रयाग) थे। ऋषि के दीपावली सन १९४० वी (३० अक्तूबर, १८८३ ई.) के देहावसान से पूर्व इसके ३२० पृष्ठ तक (११वे समुल्लास के कुल १२१ पृष्ठों में से ४७ पृष्ठ पर्यंत) प्रकाशित होकर उनके पास आ चुके थे। जिन्हें उनसे किसी व्यक्ति ने जोधपुर में ठाकुर गिरधारी सिंह के नाम से पाँच रुपये मूल्य देकर खरीद लिया। जबकि पूर्णतया सत्यार्थप्रकाश छप जाने पर उसका मूल्य मात्र २.५ रुपए) ही (डाक-व्यय सहित) रखा। गया था। जो इस प्रकार विक गये सत्यार्थ प्रकाश के पष्ठ-३२० पर निम्न लेख छप चुक था-

'(प्रश्न) द्वारिकाजी के रणछोड़जी जिसने 'नर्सीमहिता' के पास हुण्डी भेज दी और उसका ऋण चुका दिया। इत्यादी बात भी क्या झूठ है?

(उत्तर) किसी साहूकार ने रुपये दे दिये होंगे, किसी ने झूठा नाम उड़ा दिया होगा कि श्रीकृष्ण ने भेजे। जब संवत १९१४ (अर्थात सन १८५७ ई.) के वर्ष में तोपों के मारे मंदिर-मूर्तियाँ अंग्रेजों ने उड़ा दी थी, तव मूर्ति कहाँ गई थी? प्रत्युत वाघेर लोगों ने जितनी वीरता की और लड़े, शत्रुओं (अर्थात अंग्रेजों) को मारा परंतु मूर्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी। जो श्रीकृष्ण के सदृश्य कोई होता, तो इनके (अर्थात अंग्रेजों के) धुर्रे उड़ा देता और ये (अर्थात अंग्रेज) भागते फिरते (अर्थात द्वारकाधीश श्रीकृष्ण की मूर्ति ही) मार खाए उसके शरणागत (अर्थात द्वारकाधीश के भक्तगण) क्यों न पिटे जाए?'

इस लेख में ऋषि दयानन्द ने निर्भीक होकर प्रथम वार (सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण में यह लेख नहीं था) १८५७ के युद्ध के प्रसंग में अंग्रेजों को शत्रुओं के रूप में स्मरण किया था और अपने हृदय में छिपी पीड़ा की अभिव्यक्ति इन कटोर शब्दों में की थी कि 'जो श्रीकृष्ण के सदृश्य कोई होता, तो इनके (अर्थात अंग्रेज़ों के) धुर्रे उड़ा देता और ये (अर्थात अंग्रेज़) भागते फिरते।' अर्थात भारत वर्ष छोड़कर इंग्लैंड चले गये होते। वस्तुतः ऋषि दयानंद ने उपर्युक्त शब्द लिखकर यह इंगित कर दिया था कि १८५७ के युद्ध में उनकी सहानुभूति मित्रपक्ष अर्थात नाना साहव, लक्ष्मीवाई, वहादुरशहा ज़फर, कुँवर सिंह एवं विद्रोही सिपाहियों के प्रति थी और उन्होंने उनकी विजय के लिए कार्य किया था। किंतु इनमें से अधिकांश व्यक्तियों के मूर्तिपूजन होने के कारण इस युद्ध में उन्हें पराजय मिली थी। ऐसा प्रतीत होता है कि ऋषि दयानन्द के जोधपुर प्रवास में इस प्रकार अधूरे छपे विक गये। सत्यार्थ प्रकाश के देश को स्वतंत्र कराने की उत्कंट इच्छा के बोधक ऐसे अनेक प्रसंग अंग्रेज़ों की दृष्टि में आ चुके थे। अतः उन्होंने अपने मार्ग से उन्हें हटवा देने के लिए उन्हें वहाँ पडयंत्र पूर्वक ज़हर दिलवा दिया, जिससे उनकी अगले एक महीने में ही मृत्यु हो गई। ऋषि के निधन के बाद शेष सत्यार्थ प्रकाश (कुल पृष्ठ संख्या ५९२) १८८४ ईसवी में ही प्रकाशित होकर विक्रय में आ सका।

इस प्रकार १८८४ ई. में प्रकाशित द्वितीय संस्करणा नुसार सत्यार्थ प्रकाश ही अगले १०६ वर्षों तक प्रचलन में बना रहा और उसके अनुसार ही उसके विभिन्न संस्करण प्रकाशित होते रहे तथा विभिन्न भाषाओं में अनुवाद होते और प्रकाशित होते रहे, जिसे पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी जैसे मेधावी व्यक्ति ने १४ बार पढ़ा और हर बार ही उसमें से उन्होंने नये-नये विचार ग्रहण किये।

ऐसे बहु प्रचारित सत्यार्थ प्रकाश को भी महर्षि दयानंद की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा ने १९९१ ई. में अपने ३७ वें संस्करण के रूप में उसके पास उपलब्ध एक अन्य हस्तलिखित सत्यार्थ प्रकाश की प्रति के आधार पर बदलकर प्रकाशित कर दिया। जिसका आर्य जगत और विद्वानों में उस समय भी बहुत विरोध हुआ और अब तक भी (उसके और दो संस्करण ३८वाँ और ३९वाँ प्रकाशित हो जाने तक भी) हो रहा है।

मेरी दृष्टि में परोपकारिणी सभा का शताधिक वर्षों से प्रचलित ऋषि दयानंद के एक प्रमुख सैद्धांतिक ग्रंथ को इस प्रकार बदलकर प्रकाशित करना सर्वथा अनुचित कार्य है। यदि पूर्व प्रकाशित ग्रंथ में विद्वानों की दृष्टि में कुछ त्रुटियाँ या कमियाँ थी भी, तो उनका परिमार्जन मूल प्रकाशित ग्रंथ के पाठ को अक्षुण्ण रखते हुए ही इस ग्रंथ की मात्र पाद-टिप्पणियों में किया जाना था, ताकि ग्रंथ के पाठकों को उनका ज्ञान बना रहता । वस्तुतः श्रीमद दयानंद सत्यार्थ प्रकाश न्यास उदयपुर का भी यही पक्ष है। परंतु परोपकारिणी सभा, अजमेर का इस न्यायपूर्ण बात को भी स्वीकार न करके अपने कुकृत्य पर पर्दा डालने के लिए कुछ विद्वानों को लामवंद करके व्यर्थ में ही विवाद खड़ा किये रहना सर्वथा अनुचित कार्य है।

'परोपकारी' पत्र की 'चतुर्वेदविद : आमने-सामने' लेख माला

महर्षि दयानंद की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा, अजमेर के पाक्षिक मुखपत्र 'परोपकारी' में पिछले लगभग डेढ वर्ष से आचार्य सत्यजित आर्य की 'चतुर्विद- आमने-सामने लेखमाला धारावाहिक रूप से प्रकाशित हो रही है। यह लेखमाला जून, २०११ (द्वितीय) अंक से प्रारम्भ हुई थी और अब तक उसकी दिसम्बर, २०१२ (द्वितीय) के अंक तक कुल ३५ किश्तें प्रकाशित हो चुकी हैं।

हमारे पाठकों को स्मरण होगा कि नागपुर की वेद प्रचारिणी सभा ने भोपाल के पंडित उपेंद्र राव के वेद संबंधी सौ प्रश्नों का उत्तर देने के लिए वहाँ एक विद्वन्मिलन का आयोजन प्रस्तावित किया था, जिसमें आर्य समाज के लगभग ४० वैदिक विद्वानों को मार्ग-व्यय और दक्षिणा देने का आश्वासन देकर अक्तूवर, २००६ में आमंत्रित कियाथ था, परंतु उसमें पधारने की किसी ने भी अपनी लिखित स्वीकृति निर्धारित अवधि ३१ मार्च, २००७ तक भी नहीं भेजी, जिससे यह आयोजन स्वतः ही निरस्त हो गया। बाद में वारणसी की आचार्या सूर्यदेवी चतुर्वेदा ने पंडित उपेंद्र राव के सभी सौ प्रश्नों के उत्तर हमारे पास २०१ टंकित पृष्ठों में भेजे, जिन्हें हमने पंडित उपेंद्र रावजी को उनकी टिप्पणियों के लिए दे दिया। फलस्वरूप उन्होंने ३८ हस्तलिखित पृष्ठों में प्रत्येक प्रश्नोत्तर पर अपनी संक्षिप्त टिप्पणी लिखकर हमें प्रदान की। बाद में हमने आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा से प्राप्त इन २०१ पृष्ठों के उत्तरों और पंडित उपेंद्र राव से प्राप्त ३८ हस्तलिखित पृष्ठों की टिप्पणियों को दीपावली, २००७ से पूर्व ही ऋषि मेले में विचारार्थ और निर्णयार्थ परोपकारिणी सभा, अजमेर के पास भेज दिया, जहाँ यह सव सामग्री अगले तीन वर्षों तक यूं ही पड़ी रही। बाद में फाल्गुन विक्रमी संवत २०६६ वि., इसवी सन २०१० में आचार्य सूर्यदेवजी चतुर्वेदा ने मात्र अपने उत्तरों को ही आर्य समाज, विधानसरणी, कोलकाता द्वारा 'विद्वन्मिलन-वेद समाधान समाज्या', शीर्षक से प्रकाशित करवा दिया। इस पुस्तक की समीक्षा 'परोपकारी' के अप्रैल प्रथम २०११ के अंक में प्रकाशित हुई, जिनमें लिखा गया कि 'जो (पंडित उपेंद्र) स्वयं एक पक्ष है व निर्णायक न्यायाधीश कैसे हो सकता है ?' यदि वस्तुतः चतुर्वेदा ने अपने यही उत्तर दिये होते, तो वहाँ उपस्थित पंडित उपेंद्र राव ने भी न्यायाधीश के सामने जो टिप्पणियाँ उनके इन उत्तरों पर की होती, वे ही टिप्पणियाँ उन्होंने मुझे लिखकर दी और मैंने इसे समस्त सामग्री को (अर्थात वेद विषयक शत प्रश्न, उनके उत्तर और उत्तरों की टिप्पणियों का संलग्न ग्रंथ) अपनी सांप्रदायिक टिप्पणियों के साथ चतुर्वेदी विदः आमने-सामने' ग्रंथ के रूप में ८ अप्रैल २०११ को प्रकाशित कर दिया। तब पंडित उपेंद्र राव के निर्णायक न्यायाधीश हो जाने का प्रश्न ही कहाँ पैदा होता है?

अब हमारे द्वारा प्रकाशित इस संपूर्ण ग्रंथ की वास्तविकता, समीक्षा न करके उसके खंडन के वहाने प्रश्नकर्ता पंडित उपेंद्रराव और मुज ग्रंथ सम्पादक के विरुद्ध ही आचार्य सत्यजीत आर्यओ का प्रवृत्त हो जाना कदापि विद्वत संभवतः नहीं कहा जा सकता। वह भी तब अब उन्होंने हमारे द्वारा उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप ११ जुलाई २००१ को उन्हें स्पीड पोस्ट द्वारा भेज दिये गए आरंभिक दो लेखों (परोपकारी, जून २००१ (द्वितीय) और परोपकारी जुलाई २००१ के प्रथम के उनके लेखों के उत्तर में प्रेषित) को अपने इस पत्र में प्रकाशित करने से ही लिखकर मना कर दिया होइन दो लेखों को भेजते हुए मैंने उन्हें लिख दिया कि 'जब तक ऐसा (अर्थात इन दो लेखों का प्रकाशन) नहीं किया जाता है, तब तक हम अगला समाधान लेख नहीं भेजेंगे फिर वे चाहे 'परोपकारी' में कुछ भी लिखते रहें। इसलिए वे पिछले डेढ़ वर्ष से कुछ भी लिखते चले जा रहे हैं और हम तथा पं. उपेंद्र राव (जिनके पास 'परोपकारी' पत्र आता तक नहीं है) मौन हैं। ऐसी स्थिति में यदि उन्हें वास्तव में सत्यान्वेशन करना अभीष्ट था, तो वे एक अन्य प्रसङ्ग में लिखे गए अपने लेख कि '... विषयक उलझनें आमने-सामने बैठकर ही पूरी सुलजाई जा सकती हैं। लेख की अपनी सीमा होती है। प्रतिप्रश्नों का समाधान भी अपेक्षित होता है। धैर्यपूर्वक प्रश्न-समाधान हो, तो लेख से भी समाधान हो सकता है।'-परोपकारी, दिसम्बर (प्रथम), २०१२, पृ. ३८ स्तम्भ-२ पर आचरण करते। उनकी जानकारी के लिए निवेदन है कि हम लोगों ने वेद पर बाहर से थोपी गई अवदारणाओं के आधार पर कुछ भी नहीं लिखा है, अपितु स्वयं ही वेदों का गहन अध्ययन करके लिका है जैसा कि दिल्ली के हंसराज कॉलेज के अवकाश प्राप्त हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ सत्यदेव चौधरी अपने एक लेख में लिखते हैं कि पं. राव के प्रश्न निःसन्देह सटीक एवं मान्य हैं और विदुषी चतुर्वेदा के उत्तर उनकी अपनी दृष्टि से गवेषणापूर्ण एवं प्रमाण-पुष्ट हैं। यह प्रश्नोत्तर शतक में प्रस्तुत प्रश्न जितने स्वच्छ एवं स्वतः बोध्य उद्धरणों के रूप में हैं, इनके उत्तर परिपूर्ण तथा विस्तृत होते हुए भी उतने स्वच्छ एवं स्वतःबोध्य रूप में प्रस्तुत नहीं किये गए। अनेक स्थलों पर व्युत्पत्तियों का आधार लिया गया है, जिससे कि उत्तर यथेष्ट वन पड़ें। किन्तु वेदों को, विशेषतः ऋग्वेद को पूर्णतः समझ सकना सरल नहीं है। अतः यास्क के कथनानुसार समय-समय पर इसका भाष्य निम्नोक्त आचार्य मनीषी करते रहे हैं। ऋषि, वैयाकरण, नैरुक्त, आत्मप्रवाद, परिव्राजक और पूर्वयाज्ञिक। (निरुक्त परिशिष्ट १३:९)

वेदों के रचयिता ऋषियों को अपने-अपने रचित मन्त्रों से वास्तव में क्या अभीष्ट रहा होगा, यह खोज निकालना सरल नहीं है। किसी कवि के मन की गहराई तक कोई भी चिन्तक या समीक्षक आज तक नहीं पहुँच सका। पाश्चात्य वेदज्ञों ने तथा उनके अनुकरण में अनेक भारतीय वेदज्ञों ने उक्त प्रकार की अनेक शङ्काओं तथा प्रश्नों के उत्तर में इन्हें मिथक (मायथोलॉजी) मान लिया है। यूँ वेद को अजर और अमर काव्य भी कहा गया है। देवस्य पश्य काव्यं न ममाप न जीर्यति (अ. १०।८।३२) परन्तु कोई भी काव्य इतिहास नहीं है। इसकी बहुविध सामग्री प्रकारान्तर से इङ्गित करती है कि यह सामग्री वेद मन्त्रों द्वारा तभी प्रस्तुत की गई होगी, जबकि समाज पर्याप्त रूप से विकसित हो चुका होगा। वेद मंन्त्रों की सामग्री आगे चलकर पुराणों में, रामायण-महाभारत में और इससे आगे संस्कृत के काव्यों तथा नाटकों में किसी न किसी रूप में प्रस्तुत हुई है। इतना ही नहीं, यह आज के युग तक हमारे समाज के हर कार्य में किसी न किसी रूप में समाहित होती चली आ रही है। इसी में वेद की महत्ता है। 'अब फिर 'आमने-सामने' पुस्तक की चर्चा। यदि यह पुस्तक उक्त प्रकार के प्रश्नों और इनके उत्तरों को ध्यान में रखकर पढ़ी जाए, तो अत्यन्तज्ञानवर्धक है। इसमें कम से कम (२२५ पृष्ठ गुना ४ अर्थात १००० उद्धरण होंगे, जिनके अर्थ यता सम्भव सरल भाषा में दिये गए हैं। जागरूक पाठक इस पुस्तक को इस रूप में पढ़ने के बाद स्वयं निर्णय कर लेगा कि इसमें वैदिक कालीन युग का तथा विकसित समाज का कितना अधिक तथा बहुविध वर्णण उपलब्ध है। इस वर्णण से वह इस निर्णय पर भी पहुँच जाएगा कि वेद सृष्टि की उत्पत्ति होते ही अविर्भूत हुए हैं, अथवा नहीं? 'आज का विज्ञान स्वीकार करता है कि अनेक प्राकृतिक पदार्थों की उत्पत्ति के बाद डायनासोर आदि पशुओं की उत्पत्ति हुई और फिर मानव की।

(क्रमशः)

हैदराबाद का रक्त स्नान

दयानन्द की तलवार उठाओ- आतंकवाद को मिटाओ

-सत्यव्रत सामवेदी

जयपुर, २५ फरवरी- आतंकवादियों ने २१ फरवरी को हैदराबाद को पुनः रक्त स्नान करने के लिए मजबूर कर दिया। १२ लोगों की मौत हो गई और ७८ घायल हो गए। यह धमाके तव हुए, जवकि आंध्र सरकार को आगाह कर दिया गया था कि देश के दुश्मन हैदरावाद को लहूलुहान करने की तैयारी कर रहे हैं। यह स्थान हैदराबाद के दिल चारमिनार से बमुश्किल ४ किलोमीटर पर है। शाम को दिलसुखनगर में मेला सा लग जाता है ौर अवकाश के वाद जनसमुद्र उमड़ने लगता है। यहीं पर बस स्टैंड है। जहाँ से लोग चारों दिशाओं में जाने के लिए बस पकड़ते हैं। बस स्टैंड से मेन रोड़ के उस पार कोणार्क थिएटर समेत तीन बड़े थएिटर हैं। कोणार्क थिएटर के सामने आनंद टिफिन सेंटर है और शाम को ६.५८ पर एक साइकिल पर रखे टिफिन बम धमाके ने टिफिन सेंटर को तबाह कर दिया। पूरा इलाका धुएं से भर गया। सड़क पर ४० लोग दर्द से चीख रहे थे। जो नहीं चीख रहे थे, वे इस दुनिया से चले गए थे। २००२ में भी दिलसुख नगर में ब्लास्ट हुआ था।जिसमें दो लोग मारे गए थे। २००२ में भी फुटओवर ब्रिज पर बम रखा था और इस बार भी वहीं बम रखा गया। गोकुल चाट भंडार और लुंबिनी पार्क धमाकों में ४२ लोगों की जानें गईं। इससे पहले सात माह पूर्व पुणे में १ अगस्त २०१२ को सीरियल बम धमाके हुए थे। इस धमाके की जयपुर ब्लास्ट से भी समानता है। जयपुर में भी २००८ को शाम ७.३० बजे से ७.४३ बजे तक १३ मिनट में आठ धमाके भीड़-भाड़ वाले इलाकों में हुए थे और ६५ की मौत हुई थी और ३० से ज्यादा घायल हुए थे। जयपुर में भी साइकिलों पर टिफिन बम रखे हुए थे। जयपुर विस्फोटों में भी टाइमर का इस्तेमाल हुआ था।बम विस्फोटों में भारतीयों का मरना नियति बन गई है। हमारे राजनीतिज्ञ बड़े बेशर्मी से कहते हैं कि यह होमग्रोन टेरर है। अर्थात भारत के ही आतंकवादी विस्फोट कर रहे हैं। हमारे राजनीतिज्ञों को यह कहने में शर्म आती है कि सारा आतंक पाकिस्तान से आता है। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की सरकार ने अमेरिका के जजों से कहा था कि सारी दुनिया ही युद्ध का मैदान है। जब तक कि हवहर आतंकी को नष्ट नहीं कर दिया जाता। डिस्नी लैंड की खूबसूरत राहों से लेकर हवाई के रेतीले किनारों तक सब कुछ युद्धभूमि है। हर आतंकी देश का दुश्मन है। हम चिन्तन नहीं करते कि अमेरिका आतंकवाद का कैसे मुकाबला कर रहा है। ९।११ के बाद अमेरिका ने एक भी आतंकवादी को अमेरिका में बम विस्फोट करने नहीं दिया। अमेरिका में किसी भी नागरिक को बिना वकील के गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। इस कानून के वावजूद एक आदमी को आतंकी होने के संदेह पर गिरफ्तार कर लिया गया और बिना मुकदमा चलाए पाँच वर्ष तक जेल में रखा गया। ९। ११ की घटना के पाँच वर्ष बाद जब उसे अदालत में पेश किया गया, तो अदालत खचाखच भरी हुई थी। यह जानने के लिए कि बिना वकील के और बिना मुकदमे के उसे पाँच वर्ष तक जेल में कैसे रखा गया? अमेरिका की जनता क्रोध में थी। कोर्ट में सराकारी वकील ने कहा कि अमेरिका की जनता की रक्षा के लिए हमने ऐसा किया। देश की जनता की रक्षा के लिए जार्ज बुश कानून की अवहेलना करने के लिए तैयार हैं और बदनामी सहने के लिए भी तैयार हैं। सबसे बड़े बुश विरोधी बराक ओबामा ने भी यही आदेश जारी किया कि किसी भी अमेरिकी विदेशी को अमेरिकी अथवा विदेशी को बगैर किसी सबूत के किभी भी गिरफ्तार किया जा सकेगा। अमेरिका में ोबामा के विरुद्ध इस देश को लेकर भयंकर आक्रोश है, परंतु ओबामा इस आक्रोश की परवाह नहीं करते।

अब भारतवर्ष के नेताओं पर आप नज़र डालिए। वे हमेशा कानून की दुहाई देते हैं। चाहे आतंकवादी सारे देश को लहूलुहान क्यों न कर दें। हम रियाज़, यासीन, इकबाल आदि आतंकवादियों को पहले तो पहचान ही नहीं पाते और पहचान कर पकड़ लेते हैं, तो छोड़ देते हैं। आतंकी कलकत्ता की जेल से छूट जाता है और फिर पुणे में जर्मन वेकरी को बम विस्फोट से तबाह कर देता है। जब तक हमारी पुलिस उसे ढूँढने का प्रयास करती है तो वह पाकिस्तान के चैनल्स पर भारत की मज़ाक उड़ाता हुआ दिखाई देता है। कराची में दाऊद मखौल उड़ाता हुआ दिखाई देता है। दाऊद की जानकारी उसके समाधि से लेने में हमें डर लगता है और पलक-पाँवड़े बिछाकर उसे मैच दिखाने के लिए उतावले हो जाते हैं। हमारे देशभक्त नेता हाफिज़ से मिलने हुर्रियत नेताओं को पाकिस्तान भेजते हैं और फिर हाफिज़ पाकिस्तान के नेताओं से मंत्रणा करता है कि कश्मीर को आज़ाद कराया जाये। हमारे राजनेता आतंकवादियों से डरे हुए हैं और उन्हें सम्मानसूचक शब्दों से विभूषित करते रहते हैं। सत्तारूढ़ कांग्रेस के महासचिव का आतंकवादियों के प्रति इतना आदर भाव कि वे ओसामाजी की कहकर उसका नाम लेते हैं और हमारे गृहमंत्री जी श्री हाफिज़ और मिस्टर सईद से नवाज़ते हैं। क्या ऐसे राजनेता बारतवर्ष को आतंकवाद से मुक्त करा पाएँगे?

देश के दुश्मनों को नष्ट करने की सोच, उसी तरह की रणनीति और आक्रमण करने की तैयारी और हर तरह के परिणामों के लिए तत्पर रहना। सोच। परिणाम। ऐसे होगा आतंकियों का सफाया।

हैदराबाद हमले से एकदम नई बहस खड़ी हुई। इससे पहले खुफिया तंत्र की सौ फीसदी विफलता देखी जाती थी। या कि बहुत आधी-अधूरी, फैली-फैलाई धुंधली सी जानकारी राज्यों को भेजी जाती थी। कि आतंकी हमला हो सकता है। सूचनाएं हैं। ऐसी अलर्ट पर कोई ध्यान दे, तो भी कुछ नहीं कर पाता था। वैसे ध्यान देता भी नहीं था। जयपुर

మహర్షి దయానంద లేఖావళి

ఆంగ్లమూలం : **భరత్ భూషణ్** యం.ఎ.జె.డి. సీనియర్ సబ్ఎడిటర్ 'సమాచార్'

తెలుగు అనువాదం : **చలవాది సోమయ్య,**

సంస్కృత పఠనం పెంపొందించండి విజ్ఞాపన పత్రం

ఈ లేఖ ద్వారా ఆర్యావర్త (భారతదేశ) ఆంగ్లప్రభుత్వాన్ని ప్రార్థించునదేమనగా ఈ దేశప్రజలను ప్రాచీన ఋషిమునుల సాంప్రదాయ పద్ధతిలో సంస్కృతాన్ని పఠించడానికి ప్రోత్సహించమని. దీని వలన పరిపాలకులకు పాలితులకు (ప్రజలకు) యిరువురికి లాభదాయకంగా ఉంటుంది.

నేను ఈ ఆర్యావర్తదేశవాసులకు కూడ హృదయ పూర్వకంగా విన్నవించేదేమంటే సంస్కృతభాషను సాంప్రదాయిక పద్ధతిలో పఠించుతూ దాని అభివృద్ధికి కృషి చేయమని. సంస్కృతజ్ఞానం నష్టమైతే ప్రజలకు అత్యంత అపకారం జరుగుతుంది. అందులో సందేహంలేదు.

నేను వేదాలను చదివి అందులో జ్ఞానాన్ని కొంత ఆర్జించి, శాస్త్రాలను పఠించడానికి నర్మదా నదీ తీరాలకు వెళ్ళాను.

మధురలో మహాపండితు డైన స్వామి విరజానందుల వారి నుండి వ్యాకరణజ్ఞానం పొందాను. నేను ఆయన వద్ద ఉండి నా సందేహాలన్నింటిని నివృత్తిచేసికున్నాను. అక్కడ నాకు ప్రాచీన, నవీన గ్రంథాలను పఠించి మననం చేసికొనే అవకాశం కూడ లభించింది. అప్పడు నేను గ్వాలియర్‌కు వెళ్ళాను. అక్కడ నేను ఇంతరవకు చదివినవి పఠించిన వాని నన్నింటిని మననం చేశాను. అదే విధంగా నేను దేశంలో దూరప్రాంతాలను విస్తృతంగా పర్యటించి ఎప్పటి కప్పడు నూతన విషయాలను చదువుతూ పూర్వం చదివిన దానిని ఆలోచించుతూ ఉన్నాను.

ఎప్పడు సందేహాలు కలిగితే అప్పడు నేను స్వామీజీని వివరాలు అడిగి ఆయన చెప్పే సమాధానాలకు సంతృప్తి చెందాను. నేను పఠించిన దాని ఫలితంగా వేదాలు, మరియు ఋషులు మునులు రచించిన శాస్త్రాలు సత్యాలని నిశ్చయించు కున్నాను కారణం వానిలో అసాధ్యమైందిగాని, అసంబద్ధ మైంది గాని ఏదీలేదు. వాటిని అధ్యయనం చేయకుండ ఎవరూ సత్యజ్ఞానాన్ని పొందలేరు. వానిలో ఉన్నజ్ఞానం మానవ కోటికి శ్రేయోదాయకమైంది. అటు వంటి జ్ఞానం లేకుండా సత్యాసత్యాల మధ్య ఉన్న భేదాన్ని గ్రహించడం సాధ్యంకాదు.

ఉదయం పెందలకడ నిద్ర లేవడం ప్రతివ్యక్తికి ఉచితమౌతుంది. శౌచాది క్రియలు ముగించుకొని ప్రతి

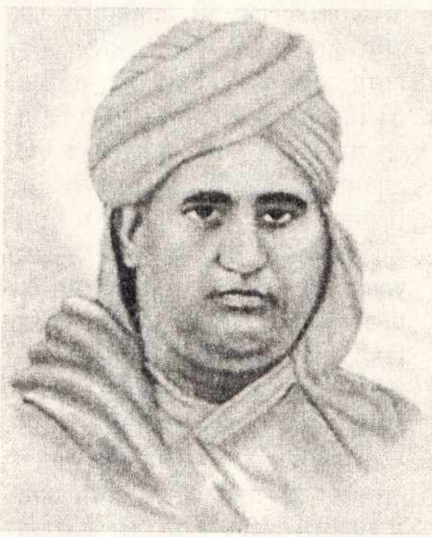

ఒక్కరు నడకకు బయటికి వెళ్ళి పరిశుభ్రమైన ఏదో ఒక బహిరంగ ప్రదేశంలో తప్పకుండా నడవాలి. ఏకాంత ప్రదేశంలో ఒకచోట కూర్చుండి గాయత్రీ మంత్రాన్ని స్మరిస్తూ దాని అర్థంపైన పూర్ణ ఏకాగ్రతనుంచాలి.

దీని తరువాత ప్రతి ఒక్కరు తప్పకుండ భగవంతుని ఇలా ప్రార్థించాలి. "పరమేశ్వరా నీ దయవల్ల వేము పవిత్రులమై ధర్మమార్గాన నడుస్తూ సద్గుణాలను పొందెదము గాక. నీ దయవల్లనే మా జీవితంలో సమస్త శుభాలు సంభవిస్తున్నాయి. నీ కృపా కటాక్షం చేత మేము నీ ఉపదేశాలను అనుసరించుతూ, ఉత్తమగుణాలనార్జించి స్థిరంగా నీయందు పూర్ణ విశ్వాసం ఉంచెదముగాక"

ఆ తరువాత భగవంతుని యందు భక్తి సలిపే సమయం వస్తుంది. ఒకొక్కక్కరు తప్పకుండ యోగాసనంలో కూర్చుండి తన ఇంద్రియాలను, ప్రాణ శక్తిని (ప్రాణాయామం ద్వారా) మరియు జీవాత్మను ఏకాగ్రం చేసి భగవంతుని ధ్యానించుతూ, తన్నుతాను మరచిపోయి భగవదానందంలో మగ్నుడు కావాలి.

నేను ఆర్యావరత్తం కొఱకు నిజంగా దుఃఖిస్తున్నాను. ఒకానొకప్పడు ఈ దేశంలో పలురకాలుగా విజ్ఞానం వర్థిల్లి ప్రజలు ఎంతో సుఖంగా జీవించారు, అనేక మంది ఋషులు, సత్పురుషులు ఈదేశంలో ఉద్భ వించారు. ఈ దేశంలో రాజులనేకమంది నివసించి వారి ధర్మానుసారం పరిపాలించారు. వారు ధర్మ విరుద్ధంగా ఎవరి ఎడ అధికమైన అనుగ్రహం చూప లేదు.

కాని ఇప్పడీ దేశం చాల చెడిపోయింది. ఇలాంటిదేశం మరొకటి కనబడడం లేదు. అందుకని అందరికి నేనిచ్చే సలహా చెడును విడిచిపెట్టి మంచిని అనుసరించమని. భారతదేశాన్ని పాలించుతున్న విదేశీపాలకులకు నావిన్నపం. వారు ప్రజలను తప్పకుండ ఒప్పించి ఋషులు, మునులు రచించిన శాస్త్రాలను, వేదాలపై వారు వ్రాసిన భాష్యాలను పఠించేట్లు చేయమని. వారు తప్పకుండ ప్రజలను ప్రోత్సహించి ఆయా శాస్త్రాల సరియైన అర్థమేమిటో గ్రహించి తదనుసారం వారినడతను నవరించుకొనేట్లు చేయమని. ఇదొక్కటే ఈదేశప్రజలు అభివృద్ధిచెంది బాగుపడడానికి మార్గం మరొక మార్గలేదు. ఆర్యావర్తం అభివృద్ధి చెందడానికి, దాని శ్రేయస్సుకు సంస్కృతం పఠించడం తప్పనిసరి. అది అత్యంత స్వభావ సిద్ధమైంది శాశ్వతమైంది. దాని అభ్యుదయం (అభివృద్ధి) మరొక భాష ద్వారా

సాధ్యంకాదు. మిగిలిన భాషలను వాటి ఉపయోగాన్ననుసరించి మాత్రమే తప్పకుండా నేర్చుకోవాలి. జ్ఞానం పొందడానికి సంస్కృతానికి అత్యధిక ప్రాధాన్యం ఇవ్వాలి.

రాజు (విద్యలేని) మూర్ఖుడుగా ఉండడం ఎంతోగర్హించదగింది కాని పాలింపబడేవారు. ప్రజలు మూర్ఖులైతే వారూ అంతే గర్హించదగిన వారవుతారు. మూర్ఖులతో నిండిన దేశాన్ని పరిపాలించడం రాజుకు గౌరవప్రదం కాదు. విద్యావంతులను న్యాయకారు లను, మేధా సంపన్నులను పరిపాలిం చడం అతనికి గౌరవ ప్రదమౌతుంది. రాజు తన ప్రజలు అలాంటివారు కావడానికి తప్పకుండ సహాయం చెయ్యాలి.

రాజు తన రాజ్యాన్ని జూదం, దొంగతనం, వ్యభిచారం, బాల్య వివాహాలు, అజ్ఞానం, వంటి నింద్య కర్మలనుండి విముక్తం చేయడానికి తగిన విధి విధానాలను తప్పనిసరిగా రూపొందించి శాసనం చేయాలి. వాటిని ప్రజలు తప్పకుండా అనుసరించాలి.

ఏ రాజాజ్ఞకూడ ధర్మానికి విరుద్ధంగా ఉండకూడదు. ధర్మమంటే అర్థం న్యాయం, న్యాయమంటే అర్థం పూర్ణంగా పక్షపాత రహితంగా ఉండడం జ్ఞానం "ధర్మాన్ని" రక్షిస్తుంది. కారణం జ్ఞానం ద్వారానే ఎవరైనా మంచి చెడుల మధ్య ఉన్న భేదాన్ని, తనకు అవసరమైన దేదో దానికి భిన్నమైనదేదో గ్రహించ గలుగుతారు.

కనుక నేను భగవంతుణ్ణి ప్రార్థించేది. పరమేశ్వరా నీవు సచ్చిదానంద స్వరూపుడవు, అనం తుడవు, సంపూర్ణ పవిత్రుడవు బంధన రహితుడవు, న్యాయకారివి, సర్వశక్తి మంతుడు, అజన్ముడవు, శాశ్వతుడవు, అమరుడవు, అంతర్యామివైన పరమాత్మవు, విశ్వకర్తవు ధర్మవు దయాసముద్రుడవు. మా యందు దయచూపుము. తద్వారా మేము వేదాల్లో ఉండే జ్ఞానాన్ని, అన్యశాస్త్రాల జ్ఞానాన్ని పొందెదముగాక!

ఆర్యసమాజ నామం అత్యంత యుక్త మైంది:

(గోపాలరావు హరిదేశ్‌ముఖ్‌కు 12-2-1875 తేదిన వ్రాసిన లేఖనుండి)

ఈపాటికి మీరు ఆర్యసమాజాన్ని ప్రారంభించారా లేదా? మీరు అలా చేయకపోతే త్వరగా చేయండి.

ఒక ఉత్తమ కార్యాన్ని ప్రారంభించ డానికి ఏమాత్రం ఆలస్యం చేయ కూడదు.

ఆర్యసమాజ నామం అత్యంత యుక్తమైంది (తగినది) కారణం, అది సమస్త దోషాల నుండి విముక్తమైంది.

ఈ నామంలో ప్రశంస, ప్రార్థన, భక్తి మరియు ఇతర సమస్త ఉత్తమ కార్యాలు ఇమిడి ఉన్నాయి. ప్రార్థన సమాజ నామం దోషయుక్తమైంది.

ప్రార్థనకు అర్థం ప్రార్థించుట (ఒకక్రియ) సమాజమున కర్థం సంస్థ అని ప్రార్థించే సంస్థ ఒకటి ఎలా ఉంటుంది? అయినప్పటికి అది కేవలం ప్రార్థించడానికి మాత్రమే సంబంధించిన సంస్థ అనే అభిప్రాయాన్ని కలిగిస్తుంది. దానిలో ప్రశంస, భగవంతుని ఎడ భక్తి మరియు ఇతర ఉత్తమ కార్యాలు కలిసి ఉండవు కనుక మనం ఆసంస్థకు పెట్టేపేరు మరల ఎవరూ దానిపై ఎటువంటి దోషారోపణ చేయడానికి తావివ్వనిదై ఉండాలి.

పండితులు స్వామిజీ యొక్క వైదుష్యాన్ని (పాండిత్యాన్ని) అంగీకరించారు:

(గోపాలరావు హరిదేశ్‌ముఖ్‌కు 16-3-1875 తేదిన వ్రాసిన లేఖనుండి)

బొంబాయి పండితులు నాకు సరియైన సంస్కృత వ్యాకరణజ్ఞానం లేదనే లోకవార్త వ్యాపింపజేశారు. దీన్ని విన్నతరువాత సంస్కృత వ్యాకరణానికి సంబంధించిన ప్రశ్నలను చర్చించడానికి ఒక సభను ఏర్పాటు చేయడం జరిగింది. పండితులు ఆసభకు హాజరయినారు. వ్యాకరణం మీద చర్చ ప్రారంభం కాగానే పండితులు ఆశ్చర్యచకితులై మూకీభావం వహించారు. పూర్ణంగా నిరుత్తరులు గావించబడ్డారు. వచ్చిన ప్రేక్షకులు నాకున్న వ్యాకరణ జ్ఞానాన్ని అంగీకరించమని పండితులను వత్తిడి చేశారు. అప్పడు నేను పండితులను సంస్కృత వ్యాకరణంపై నేనడిగే కొన్ని ప్రశ్నలు వ్రాసికొని వాటికి తగిన ప్రమాణాలు చూపుతూ సమాధానాలు చెప్పమని అడిగాను. అప్పటి నుండి ప్రతి ఒక్కరు నాపైన దృఢ విశ్వాసాన్ని పెంపొందించు కున్నారు.

అపూర్వమైన వేదభాష్యం:

విజ్ఞాపన పత్రం 20-11-1876

నేను నాలుగు వేదాలపైన భాష్యం వ్రాయడం ప్రారంభించాను. ఈభాష్యం రెండు భాషల్లో సరళమైన సంస్కృతం లోను మరియు ఆర్యభాష (మధ్య భారతం, కాశి, ప్రయాగలకు సంబంధిం చిన హిందీ) లోను వ్రాయడం జరుగు తుంది.

నేను సంస్కృతంలో వ్రాసే విధానం ఏకొంచెం ఈభాషను చదువుకున్న వారైనా వేదాల అర్థాన్ని గ్రహించ గలిగేంతగా అతిసరళంగా ఉంటుంది.

నేనీ భాష్యాన్ని 20-8-1876 తేదీన ప్రారంభించి ఇప్పటికీ 10,000 వేదమంత్రాలకు భాష్యాన్ని 1-12-1876 తేదీకి పూర్తి చేశాను. నేను ప్రతిరోజూ తక్కువలో తక్కువ 50 మంత్రాలకు, ఎక్కువలో ఎక్కువ 100 మంత్రాలకు వ్యాఖ్యానం చేశాను. (అంటే స్వామీజీ 3 నెలల 11 రోజుల్లో పదివేల మంత్రాలకు భాష్యం చేశారన్నమాట. ఇది అపూర్వం, అద్భుతం. ఇది వేదాలపై వారికున్న తిరుగులేని అధికారాన్ని దక్షతను తెలుపుతుంది. -తెలుగు అనువాదకుడు)

ఈభాష్యం అపూర్వంగా ఉంటుంది. అంటే అర్థం - ఏదీ కూడ ప్రమాణ రహితంగా, ఏదీ కేవలం ఊహ మీద ఆధారపడి ఉండదు. నేను వ్రాసేదంతా వేదాల నెరిగినవారు, సత్య వాదులు, ఆత్మనిగ్రహం కలవారు, న్యాయకారులు బ్రహ్మనిష్ఠులు, కేవలం మానవ కల్యాణమే కోరేవారు అయిన ఆర్యావర్తపు ప్రాచీన విద్వాంసుల రచనల ఆధారంగా ప్రమాణబద్ధంగా ఉంటుంది.

అటువంటి విద్వాంసుల రచనలు :

ఆరు వేదాంగాలు (షడంగాలు) - శిక్ష, కల్పము, వ్యాకరణము, ఛందస్సు, నిరుక్తము, జ్యోతిషము, నాలుగు బ్రాహ్మణ గ్రంథాలు - ఐతరేయ, శతపథ, సామ, గోపథములు, షట్ దర్శన శాస్త్రాలు (ఉపాంగాలు) - పూర్వ మీమాంస, వైశేషిక, న్యాయ, యోగ, సాంఖ్య, వేదాంతగ్రంథములు, నాలుగు

RNI.No.52990/93 Reg. No. HD / 783 / 2012-14 12-03-2013 आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆంధ్రప్రదేశ్, 4 - 2 - 15
మహర్షి దయానంద మార్గము సుల్తాన్ బజార్,
హైదరాబాద్ - 500 095, ఫోన్ : 040 - 24753827,
ఫోన్ : 66758707, ఓబిసి : 24557946
సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య ప్రధాన్ సభ

आतंकी विस्फोट के बारे में मध्य प्रदेश पुलिस ने काफी ठोस सूचना राजस्थान को भेजी थी। पुलिस प्रमुख ने उसे देखना तक उचित नहीं समझा था। किन्तु इस बार सबको काफी कुछ पता था। लगभग सब कुछ। दिलसुख नगर इलाके तक का नाम था। संभवतः पहले भी वहाँ हो चुके हैं विस्फोट इसलिए। जो भी पुलिस कमिश्नर वहाँ गए, तब तक वहाँ कुछ भी नहीं था।बाद में साइकिल और बम पहुँचे। स्पष्ट है कि पुलिस कमिश्नर के सामने सजाएं जो नहीं ही जाएंगे। क्यूं ऐसी सोच नहीं थी कि जब तक हैदराबाद का चप्पा-चप्पा पुलिस बूटों से न गूँज उठे, वो चैन से नहीं सोयेंगे। गुप्तचरों के दल दिन-रात जुटेंगे और सेना, अर्द्धसैनिक बलों अन्य राज्यों, सारे जहाँ से सहाचता लेंगे। हैदराबाद ही क्यों उन सभी छह राज्यों के लिए समूचा देश भिड़ जाता। खोजी शिकारी कुत्तों, की तरह चुस्त और भूखे भेडियों की तरह आक्रामक रखवाले ही आतंक के विरुद्ध लड़ सकते हैं। शेर की तरह शूर-वीर ही इस युद्ध का नेतृत्व कर सकते हैं। धीरे-धीरे शांति से और 'अभी काफी समय है' जैसी हमारी सोच हमें कुख्यात किन्तु हास्यास्पद बगदादी बॉब बना देगी। सद्दाम हुसैन कैबिनेट में सूचना मंत्री थे मोहम्मद सईद अल साहफष अप्रैल २००३ में उनका टीवी पर कथन दुनिया भर ने सुना था। अभी तो काफी समय है। शान्ति से रोक लेंगे। बगदाद से १०० मील दूर है अभी अमेरिकी सेना। ठीक उसी समय आधी टीवी स्क्रीन पर दुनिया ने देखा अमेरिकी टैंक बगदाद की सड़कों को रौंदते हुए बढ़ रहे थे। ऐसा नैराश्य निश्चित ही हमें पीछे धकेल देगा। इसलिए ऐसे नैराश्य में नहीं डूबना है। आतंक के विरुद्ध ही नहीं, हर एक युद्ध दो तयशुदा तरीकों से लड़ा जाता है।

१ रणनीति :- (अ) हमलों को भांपने, हमालवरों को पहचानने और हमले से पहले से पहले ही उन्हें नष्ट करने या पकड़ने की।

(ब) हमलों के बाद कठोरतम कार्यवाही करने और साथ देने वालों को नष्ट करने की। हथियार व नेटवर्क तबाह करने की। पैसे के श्रोत बंद करने की ।

२. आक्रमण :- लगातार चलने वाली भयावह प्रक्रिया। आक्रमण मानसिक। शारीरिक और सशस्त्र हर तरह के हो सकते हैं। यह तब करना अनिवार्य है, जब तक कि दुश्मन पूर्णतः नष्ट न हो जाए। हम यानि हमारी सरकार या सरकारें 'हमलेसे पहले ही दुश्मन को नष्ट करने वाली रणनीति में १०० फीसदी विफल है। बाकी रणनीति इसीलिए व्यर्थ है क्यों कि साँप काटकर चले जाने के बाद लाठी पीटने से कर्कश शोर ही मचेगा, लाठी ही टूटेगी, चोट हमें ही लगेगी। फिर धरती खराब होगी, सो अलग। हैदराबाद विस्फोटों से हमारी यह कमज़ोरी पुरज़ोर तरह से उभर गई है। आतंक के विरुद्ध युद्ध बहुत-बहुत ही लंबा होगा। अभी जैसा है, वैसे रवैये से असंभव है कि हमले रोके जा सकें। किन्तु रोकने ही होंगे। और सरकार को ही रोकने होंगे। जिम्मेदारी नहीं, धर्म है उनका वरना दहशत में जीने लगेंगे सारे भारतीय। और दहशत होगी सरकार की। कहते हैं जब नागरिक सरकार से डरने लगे, तो उसे आतंक कहते हैं। और जब सरकार नागरिकों से डरने लगे, तो उसे स्वतंत्रता कहते हैं। काश हमारी सरकार हम नागरिकों से डरने लगे।

महर्षि दयानंद ने आज से १४० वर्ष पूर्व राष्ट्र रक्षा के मंत्र दिये थे कि हमारा राष्ट्राध्यक्ष कैसा हो, इन्द्रो जयाति न परा जयाता अधिराजो राजसु राजयतै। चार्कृस्य ईड्यो वन्द्यश्चोपसद्यो नमस्योभवेह।।

हे मनुष्यों । जो इस मनुष्य के समुदाय में परम ऐश्वर्य का कर्ता शत्रुओं को जीत सके, जो शत्रुओं से पराजित न हो, उसी को सभापति राजा करे। महर्षि ने मनुस्मृति का संदेश दिया- जो दंड है, वही पुरुष राजा, वही न्याय का प्रचारकर्ता और सबका शासनकर्ता है।

जहाँ कृष्णवर्ण, रक्तनेत्र भयंकर पुरुष के समान पापों का नाश करने वाला दण्ड विचरता है, वहाँ प्रजा मोह को प्राप्त न होके आनन्दित होती है।

ఉపవేదాలు - ఆయుర్వేదం, ధనుర్వేదం, గాంధర్వవేదం, అర్థవేదం, దశోపనిషత్తులు - ఈశ, కేన, కఠ, ప్రశ్న, ముండక, మాండూక్య, తైత్తిరీయ, ఐతరేయ, ఛాందోగ్య, బృహదారణ్యకములు. వేదాలపై ఋషి, మునులు వ్రాసిన వ్యాఖ్యానాలు, వేదశాఖలుగా ఎంచబడే మొత్తం 1127 ను నేను స్వీకరించుతాను. ఈ భాష్యం వేదాల యథార్థ స్వరూపాన్ని ప్రకాశపరుస్తుంది. వేదాలపై కొందరు పండితులు ప్రచారం చేసిన సమస్త మిథ్యారోపణలను తొలగిస్తుంది. జనులు వేదాల సత్యమైన అర్థాన్ని ఎప్పుడు గ్రహిస్తారో అప్పుడువారు అసత్యాన్ని విడిచి సత్యాన్ని గ్రహిస్తారు. ఇది అందరికి సంతోషాన్ని కలిగిస్తుందనడంలో నాకు సందేహం లేదు. పాఠకులు నా వేద భాష్యాన్ని సరిగా అర్థం చేసికొని వారి జీవితాలను తదనుగుణంగా మలచు కుంటే వారు ధర్మ, అర్థ, కామ, మోక్షా లను సాధిస్తారు.

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUEMAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR